प्रवाह

महोत्सव विश्वास का 75 निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक स्थापना वर्ष : 1948

महान दिमाग वाले विचारों, औसत दिमाग वाले घटनाओं व छोटे दिमाग वाले लोगों की चर्चा करते हैं। -हेन्नरी थॉमस बकल

देश की सबसे बड़ी पंचायत लोकसभा ने अपना अध्यक्ष चुन लिया है। पर यह पूरा प्रकरण बताता है कि चीजें अंततः बहुमत से ही तय होती हैं। लोकतंत्र में विपक्ष अपनी अनिवार्य भूमिका निभाता है, लेकिन यह अपेक्षा दोनों पक्षों से है कि बहस का स्तर बना रहे और कोई शालीनता की सीमा न लांघे।

लोकतंत्र के नए प्रहरी

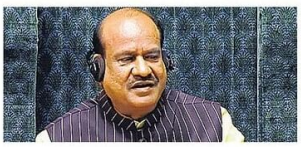

राजग के संख्याबल को देखते हुए ओम बिरला का अठारहवीं लोकसभा का अध्यक्ष चुना जाना तो खैर तय ही था, पर पिछले कुछ दिनों में इस मामले में घटनाक्रम ने जिस तरह का मोड़ लिया और बात चुनाव कराने तक पहुंची, वह नए दौर की राजनीति का संकेत है। परंपरा है कि लोकसभाध्यक्ष भले ही किसी राजनीतिक दल का हो, अमूमन उसका चुनाव सर्वसम्मति से होता है। सदन के संचालन के लिए अध्यक्ष को सभी दलों से सहयोग की अपेक्षा होती है और लोकसभाध्यक्ष के पद को चूंकि दलगत राजनीति से ऊपर माना जाता है, इसलिए अगर इस पद पर नियुक्ति सभी को भरोसे में लेकर हो, तो पद की गरिमा बढ़ती है और सदन की भी। लेकिन हुआ यों कि 48 वर्षों में पहली बार सत्ता पक्ष व विपक्ष के बीच सहमति नहीं बनी और विपक्ष ने उपाध्यक्ष पद की मांग पूरी होने में विफल रहने पर अपना उम्मीदवार भी मैदान में उतार दिया। यह दीगर बात है कि मामला वोटिंग तक नहीं पहुंचा और ओम बिरला को ध्वनि मत से अध्यक्ष चुन लिया गया। यों तो बिरला दो बार निर्वाचित होने वाले छठे लोकसभाध्यक्ष हैं, लेकिन पांच वर्ष का पहला कार्यकाल पूरा करने के बाद लगातार दूसरी बार निर्वाचित होने वाले दूसरे अध्यक्ष हैं। यदि पिछली लोकसभा का कार्यकाल देखा जाए, तो ओम बिरला के अध्यक्ष रहते 17वीं लोकसभा की कुल उत्पादकता 97 फीसदी रही, जो पिछली पांच लोकसभाओं में सबसे ज्यादा है। इसके अतिरिक्त, उनके अध्यक्ष रहते नए संसद भवन के निर्माण के साथ सदन में तीन आपराधिक कानून, अनुच्छेद 370 को हटाने और नागरिकता संशोधन समेत कई ऐतिहासिक कानून भी पारित हुए। हालांकि सौ सांसदों के निलंबन व संसद की सुरक्षा पर कुछ कड़े फैसले ज्यादा चर्चा में रहे। यही नहीं, पूरी लोकसभा के दौरान करीब 875 करोड़ रुपये की बचत भी हुई, जो सचिवालय के बजट का 23 प्रतिशत था। निर्वाचन के तुरंत बाद जब प्रधानमंत्री, विपक्ष के नेता और संसदीय कार्यमंत्री लोकसभाध्यक्ष को आसंदी तक ले गए, उस दौरान जो सौजन्य दिखाई पड़ा, वह सत्ता पक्ष व विपक्ष के बीच चल रही तल्खियों के दौर में सुकून देने वाला था। विपक्ष के पास पर्याप्त सीटें हैं, और नई स्थिति में उसके तेवर भी दबाव बनाने वाले हैं। लेकिन यह दबाव लोकतंत्र के हक में सकारात्मक परिणाम देने वाला होना चाहिए। इस संदर्भ में नवनियुक्त अध्यक्ष की टिप्पणी गौर करने लायक है कि हम बेशक अलग-अलग विचारधाराओं से चुनकर आते हैं, लेकिन देश सबसे पहले है। ऐसे में दोनों पक्षों से यह अपेक्षा है कि बहस का स्तर बना रहे और कोई शालीनता की सीमा न लांघे।

सिर्फ समस्या नहीं, समाधान भी

डीपफेक कितना ही विनाशकारी क्यों न हो, एआई कमजोर लोकतंत्रों को मजबूत बना सकता है। चुनावों में पारदर्शिता, समावेशिता और दक्षता बढ़ाने के लिए भी एआई का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसकी उन्नत डाटा विश्लेषण क्षमताएं रियल टाइम में चुनाव संबंधी डाटा की निगरानी कर सकती हैं।

जसप्रीत बिंद्रा
अतिथि व्याख्याता, हार्वर्ड विश्वविद्यालय

पिछले दो वर्षों के दौरान प्रौद्योगिकी की कहानी में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और इससे उत्पन्न उत्साह एवं व्यवधान का बोलबाला रहा है। हालांकि वर्ष 2023 के उत्तरार्ध में कॉपीराइट, पूर्वाग्रह, निजता और डीपफेक जैसे नैतिक मुद्दों के सामने आने से इस कहानी में थोड़ी कड़वाहट घुलने लगी। दुनिया के अधिकांश लोकतंत्रों में या तो चुनाव हो चुके हैं या होने वाले हैं, इसलिए 2024 में एआई की पहली प्रमुख नैतिक परीक्षा होगी कि वह लोकतंत्र की मदद करेगा या उसे नष्ट कर देगा।

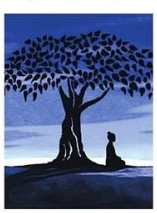

भारत में तो चुनाव हो चुके हैं, लेकिन अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, इंडोनेशिया और अन्य प्रमुख लोकतंत्रों में इस साल महत्वपूर्ण चुनाव होने वाले हैं। हालांकि डीपफेक जेनरेटिव एआई से पहले से ही अस्तित्व में है, लेकिन सोरा और स्टेबल डिफ्यूजन जैसे उत्पादों ने उसके उत्पादन को लोकतांत्रिक बना दिया है, जिससे अब बड़े पैमाने पर इसे बनाना आसान, तेज और सस्ता हो गया है। सोशल मीडिया पर भी हम सब शीर्ष पर हैं, जहां व्हाट्सएप, टिकटॉक और इसी तरह के अन्य सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म वैश्विक स्तर पर आसानी से उपलब्ध हो रहे हैं।

इस साल की शुरुआत में बांग्लादेश और स्लोवाकिया में चुनाव हुए, जिसमें डीपफेक भी एक पक्ष बन गया। बांग्लादेश के एक विपक्षी नेता को फलस्तीन के समर्थन के मुद्दे पर दुविधा की स्थिति में दिखाया गया, इस तरह का रुख अपनाना उस देश में विनाशकारी है। स्लोवाकिया के चुनाव में भी एक प्रमुख दावेदार ने कथित तौर पर चुनावों में धांधली की बात कही थी और इससे भी चिंताजनक बात थी कि उन्होंने बीयर की कीमत बढ़ाने की बात की, जो कथित तौर पर उनकी हार का कारण बनी। अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन की नकली आवाज में लोगों से यह अपील की गई कि वे अमेरिकी प्राइमरी में मतदान नहीं करें। वर्ष 2016 के कैंब्रिज एनालिटिका विवाद की यादें अब भी ताजा हैं। बड़े चुनावों के नजदीक आते ही खतरे की घंटी बज गई है।

यहीं पर मैं इसके एक दूसरे पहलू का उल्लेख करना चाहूंगा। जरा पाकिस्तान को देखिए, वहां भी इसी वर्ष की शुरुआत में चुनाव हुए। वहां के पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान जेल में थे। उनकी पार्टी का चुनाव चिह्न छीन लिया गया और उनके कुछ उम्मीदवारों को धमकाया गया और कुछ को जेल में भी डाल दिया गया। हालांकि अंततः दूसरी पार्टियों की जीत की घोषणा की गई, लेकिन ज्यादातर खबरें दावा करती हैं कि भारी धांधली और हेराफेरी के बावजूद इमरान खान की पार्टी ने अच्छी सफलता पाई। खान ने जेल में रहते हुए पूरे देश में चुनाव प्रचार करने के लिए जेनरेटिव एआई का इस्तेमाल किया और इस कहानी को पलट दिया कि एआई लोकतंत्रों को नष्ट करती है। जेनरेटिव एआई का इस्तेमाल करके उन्होंने मतदाताओं से अपनी पार्टी के लिए मतदान करने का आग्रह करते हुए फुटेज तैयार किया और इसे यूट्यूब और अन्य ऑनलाइन चैनलों पर खूब शेयर किया गया। लोगों ने उनके आह्वान पर ध्यान दिया और रिकॉर्ड संख्या में मतदान किया, जिससे उनकी पार्टी के उम्मीदवारों को बड़ी संख्या में सफलता मिली। पाकिस्तान ने दिखा दिया कि कैसे एआई का इस्तेमाल करके लोकतंत्र को नष्ट करने के बजाय उसे मजबूती दी जा सकती है।

यहां मैं डीपफेक की विनाशकारी शक्ति से इन्कार नहीं कर रहा हूं, और मुझे डर है कि भारत के किसी भी चुनाव और अन्य चुनावों में इसका इस्तेमाल विमर्श को भड़काने और मनगढ़ंत कथानक को आकार देने के लिए किया जा सकता है। हालांकि चुनावों, जो लोकतंत्र का एक मुख्य स्तंभ है, को बेहतर बनाने के लिए एआई बहुत कुछ कर सकता है। पाकिस्तान का उदाहरण इसका रचनात्मक तरीका है। चुनावों में पारदर्शिता, समावेशिता और दक्षता बढ़ाने के लिए भी एआई का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसकी उन्नत डाटा विश्लेषण क्षमताएं वास्तविक समय में चुनाव से संबंधित डाटा की निगरानी कर सकती हैं, जिससे धोखाधड़ी का संकेत देने वाली किसी भी अनियमितता की पहचान की जा सकती है। एआई एल्गोरिदम मतदाता पंजीकरण या मतदान में अनियमितताओं के पैटर्न का पता लगा सकते हैं। एआई इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग सिस्टम की सुरक्षा में भी सुधार कर सकता है। इसके अतिरिक्त, खतरे का पता लगाने वाले एल्गोरिदम संभावित साइबर खतरों की पहचान करने में मदद कर सकते हैं।

जेनरेटिव एआई स्थानीय मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करके स्थानीय बोली में उम्मीदवारों और उनके घोषणापत्रों पर बेहद व्यक्तिगत सामग्री तैयार करते हुए मतदाताओं की शिक्षा और जागरूकता को बढ़ाने में मदद कर सकता है। यह व्यक्तिगत दृष्टिकोण राजनीतिक जागरूकता बढ़ा सकता है और विशेष रूप से हाशिये पर पड़े समूहों के लोगों को सोच-समझकर मतदान करने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है। जेनरेटिव एआई इस काम को बड़े पैमाने पर, बहुत कम लागत में, उच्च दक्षता के साथ करने में मदद कर सकता है, जिससे कम पैसे वाले उम्मीदवार भी सशक्त बन सकेंगे।

एआई द्वारा संचालित प्रणालियां दिव्यांग मतदाताओं की पहुंच को भी बढ़ा सकती हैं। उदाहरण के लिए, एआई द्वारा संचालित ध्वनि पहचान प्रणालियां दृष्टि बाधित मतदाताओं को मतदान करने में सहायता कर सकती हैं। एआई जनसांख्यिकीय समूहों में जनता की राय जानने के लिए सोशल मीडिया पर मौजूद सूचनाओं का विश्लेषण कर सकता है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि राजनीतिक विमर्श में समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व हो। यहां तक कि इसकी मदद से चुनाव की लॉजिस्टिक प्रक्रिया में भी सुधार करके लागत बचाई जा सकती है, जो कि भारत जैसे विशाल देश के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। एआई मतदाता पंजीकरण और सत्यापन को बेहद कुशल बनाने में मदद कर सकता है, समय पर पात्रता सत्यापित करने के लिए विभिन्न स्रोतों से आवश्यक डाटा हासिल कर लंबी कतारों को समाप्त कर सकता है।

एआई दोधारी प्रौद्योगिकी है, जिसके बहुत सारे लाभ हैं, तो इसमें विनाशकारी शक्ति भी है। जब हम डीपफेक के जरिये चुनावों पर पड़ने वाले इसके प्रतिकूल प्रभाव को रोकने की कोशिश करते हैं, तो हमें यह भी देखना चाहिए कि यह हमारे कमजोर लोकतंत्रों को कैसे बेहतर बना सकता है। भले कमजोर ढंग से ही सही, इमरान खान की पार्टी दुनिया को इसकी इस क्षमता को दिखाने में सफल रही।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

आचार्य शांतिदेव

क्रोध, सुख और कल्याण के बिल्कुल विपरीत होता है। जब हृदय में घृणा का कांटा घर कर जाता है, तो मन को न शांति मिलती है, न ही सुख और न आनंद मिलता है। नींद और धैर्य भी चला जाता है।

क्रोध स्वभाव से दर्दनाक खा जाता है हमारी खुशियां

क्रोध भ्रम से उपजा एक रूप होता है। यह हिंसा की संस्कृति को बढ़ावा देता है। इसलिए हमें यह समझना जरूरी है कि आखिर क्रोध है क्या, क्रोध में क्या गलत है और इससे कैसे मुक्ति मिल सकती है। क्रोध नैतिक रूप से गलत तो है ही, यह व्यक्ति के कल्याण के लिए भी बुरा है। क्रोध हमारे लिए जो भी करने का वादा करता है, करुणा उससे भी बेहतर कर सकती है। मनुष्य की दो मानसिक अवस्थाएं होती हैं- स्वस्थ और अस्वस्थ। ये अवस्थाएं कल्याण और नैतिक मूल्य दोनों को दर्शाती हैं। अस्वस्थ मानसिक अवस्थाएं इस अर्थ में मानसिक पीड़ा हैं कि वे स्वयं दुख के रूप हैं और नैतिक रूप से भी बुरे हैं, क्योंकि वे स्वयं को और दूसरों को नुकसान पहुंचाने का कारण बनते हैं। प्रतिशोध और इसे भड़काने वाले क्रोध को दुख के चक्र को बढ़ावा देने के रूप में देखा जाता है।

क्रोध एक प्रकार की मानसिक आक्रामकता है, जो किसी मौजूदा अपराध के कारण उत्पन्न होती है। यह शत्रुता का एक रूप है। शत्रुता क्या है? यह संवेदनशील प्राणियों के प्रति, स्वयं की पीड़ा के प्रति, या दर्दनाक परिस्थितियों के प्रति आक्रामकता है। इसका कार्य अप्रिय स्थितियों और बुरे कार्यों के लिए आधार प्रदान करना है। एक मानसिक पीड़ा के रूप में क्रोध स्वभाव से दर्दनाक होता है। क्रोध का संबंध अज्ञानता से है। न केवल क्रोध हमेशा अज्ञानता के साथ होता है, बल्कि अज्ञानता भी क्रोध के उत्पन्न होने के लिए एक आवश्यक शर्त है, क्योंकि क्रोध की स्थिति एक विशिष्ट पीड़ित मानसिक स्थिति होती है। इस प्रकार, क्रोध एक प्रकार के भ्रम से प्रेरित होता है, जो दूसरों में बुरे गुणों को बढ़ा-चढ़ा कर पेश करता है। जब हम सोचते हैं कि कोई चीज हमारे कल्याण के लिए अच्छी है, तो हम मानते हैं कि यह आंतरिक रूप से भी अच्छी है। वहीं, क्रोध हमारे कल्याण में किसी तरह का योगदान नहीं देता। क्रोध आंतरिक रूप से अच्छा नहीं है, यह इस बात से माना जा सकता है कि क्रोध स्वभाव से दर्दनाक है और साधन रूप में भी अच्छा नहीं है। यह इस दावे से माना जा सकता है कि यह दुख और हानिकारक कार्यों के लिए एक स्थिति है। क्रोध, सुख और कल्याण के बिल्कुल विपरीत होता है। जब हृदय में घृणा का कांटा घर कर जाता है, तो मन को न शांति मिलती है, न ही सुख और न आनंद मिलता है। नींद और धैर्य भी चला जाता है। क्रोध मानसिक शांति या वास्तविक खुशी के साथ सह-अस्तित्व में नहीं रह सकता। क्रोध से विचलित होने पर भोजन का रस भी गायब हो जाता है, मन रुचिहीनता का शिकार हो जाता है। इस प्रकार, क्रोध न केवल स्वभाव से दर्दनाक है, बल्कि यह हमारी खुशियां भी खा जाता है। क्रोध केवल स्थिति को और अधिक दर्दनाक बनाता है, जिससे संकट बढ़ता जाता है।

करुणा बेहतर

सूत्र

क्रोध के बजाय हमारे लिए करुणा बेहतर कर सकती है। करुणा में क्रोध को खत्म करने की शक्ति है। करुणा में किसी व्यक्ति की पीड़ा के प्रति संवेदनशीलता के साथ-साथ यह इच्छा भी शामिल है कि वह उस पीड़ा से मुक्त हो जाए। जो मानसिक स्थिति सामाजिक अन्याय जैसी गलतियों का संकेत देती है, उसे न केवल अपने दर्द के प्रति, बल्कि दूसरों की पीड़ा के प्रति भी सचेत रहना चाहिए। क्रोध, घृणा या अज्ञानता जैसी मानसिक पीड़ा से पीड़ित व्यक्ति के लिए क्रोध नहीं, करुणा ही उचित प्रतिक्रिया है।

दूसरा पहलू

देश में उत्पादित मशरूम का 10.82 फीसदी हिस्सा बिहार में उत्पादित हो रहा है। ज्यादातर महिला किसान इसकी खेती कर रही हैं।

बिहार में मशरूम लाया महिलाओं के जीवन में बहार

आज लोगों की जुबान पर मशरूम की सब्जी, खीर, अचार, नमकीन आदि का स्वाद चढ़ता जा रहा है। देश के अन्य राज्यों की तरह बिहार में भी इसकी खेती तेजी से बढ़ रही है। नेशनल हॉर्टिकल्चर बोर्ड के आंकड़ों के अनुसार, 2021-22 में बिहार में तकरीबन 28,000 मीट्रिक टन मशरूम का उत्पादन हुआ है, जो देश में उत्पादित कुल मशरूम का 10.82 फीसदी है।

प्रियंका साहू

महिलाओं ने मशरूम की खेती में अपनी अलग पहचान बनाई है, जो खुद लाभ कमाने के साथ ही दूसरों को भी प्रशिक्षण दे रही हैं।

बिहार सरकार मशरूम की खेती करने वाले किसानों को 50 फीसदी तक का अनुदान देती है। कई जिले ऐसे हैं, जहां पुरुषों की तुलना में महिला किसानों ने मशरूम उत्पादन कर अपनी अलग पहचान बना ली है। वैशाली की मनोरमा सिंह की दस वर्षों से राज्य भर में मशरूम उत्पादन के लिए अलग पहचान है। वह खुद मशरूम उगाती हैं और दूसरे किसानों को प्रशिक्षण भी देती हैं। वह मशरूम के बीज तैयार कर खाद भी बनाती हैं। मुजफ्फरपुर जिला मुख्यालय से करीब 17 किमी दूर कांटी प्रखंड के कोठिया गांव के 45 वर्षीय किसान लाल बहादुर बताते हैं कि मशरूम की खेती में लागत कम और मुनाफा अधिक होता है। यह फसल सिर्फ 25 दिनों में ही तैयार हो जाती है।

मुजफ्फरपुर जिला मुख्यालय के कांटी प्रखंड के कोठिया गांव के लाल बहादुर बताते हैं कि मशरूम की खेती में लागत कम और मुनाफा अधिक होता है। यह फसल 25 दिनों में तैयार हो जाती है।

2012 में लाल बहादुर की मुलाकात पूसा कृषि विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. दया राम से हुई। उनसे मशरूम का प्रशिक्षण लिया और अन्य किसानों को भी जागरूक किया। उनका कहना है कि लोग पहले मशरूम को जंगली पौधा (जिसे गांव में 'गोबरछत्ता' के नाम से जानते हैं) कहते थे। काफी समझाने के बाद ग्रामीणों ने उनके साथ मिलकर मशरूम की खेती करनी शुरू की। उसी गांव की एक महिला किसान लक्ष्मी देवी बताती हैं कि लाल बहादुर ने हमें किसानी का एक नया रास्ता दिखाया है। कोठिया गांव में नारा है कि 'हर घर में खेती हो मशरूम की, हर थाली में एक व्यंजन हो मशरूम की'।

बंदरा प्रखंड की 34 वर्षीय किसान नीलम देवी कहती हैं कि उनकी कम उम्र में शादी हो गई थी। उन्होंने अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए ससुराल वालों के विरोध के बावजूद मशरूम की खेती की। आज वह 200 महिलाओं को मशरूम की खेती का प्रशिक्षण दे रही हैं। नीलम को पूसा कृषि विश्वविद्यालय में सम्मानित भी किया जा चुका है। नीलम की तरह दर्जनों महिलाएं मशरूम की खेती कर प्रतिवर्ष लाखों रुपये का लाभ कमा रही हैं। अब भोजन में मशरूम की सब्जी प्रतिष्ठा का प्रतीक बनती जा रही है। राजधानी पटना को छोड़िए, अब तो हाजीपुर, समस्तीपुर, मुजफ्फरपुर जैसे शहरों में सड़क किनारे लगे सब्जी के बाजारों में मशरूम आसानी से मिल जाता है। (चरखा फीचर)

आंकड़े

गेहूं की हिस्सेदारी

देश के तीन राज्यों-पंजाब, मध्य प्रदेश और हरियाणा में 89.9% गेहूं का उत्पादन होता है। अन्य राज्यों की हिस्सेदारी काफी कम है।

राज्य	हिस्सेदारी
पंजाब	39.6%
मध्य प्रदेश	27.8%
हरियाणा	21.5%
उत्तर प्रदेश	7.0%
राजस्थान	3.1%
बिहार	0.5%
अन्य	0.4%

नोट : आंकड़े वर्ष 2023-2024 वर्ष के हैं | स्रोत : FCI; CACP

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने अपने शिष्य नरेंद्र को बताया कि इन्सान चार प्रकार के होते हैं-बद्ध, मुमुक्षु, मुक्तात्मा और नित्य।

मन और मछली एक समान

अंतर्यात्रा
संकलित

एक बार स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने अपने शिष्य नरेंद्र को बताया कि इन्सान चार प्रकार के होते हैं-बद्ध, मुमुक्षु, मुक्तात्मा और नित्य। नरेंद्र बोले-गुरुवर विस्तार से बताएं।

स्वामीजी ने समझाया कि बद्ध वे हैं, जो संसार में बंधे रहते हैं। मुमुक्षु वे हैं, जो संसार से मुक्ति की इच्छा रखते हैं और इनमें से कोई-कोई मुक्त भी हो जाते हैं। मुक्त जीव संत-महात्माओं के समान होते हैं। वे संसार की इच्छाओं में नहीं फंसते और ईश्वर में ध्यान लगाए रहते हैं। नित्य जीव इस संसार से इतने विरक्त हो चुके होते हैं कि एक दिन अपने सभी कर्म पूरे करके ईश्वर में ही नित्य हो जाते हैं। नरेंद्र ने कहा, गुरुदेव, कृपया करके इसे और आसान उपमा देकर समझाएं। रामकृष्ण ने मछली का उदाहरण देते हुए समझाया कि जब जाल तालाब में फेंका जाता है, तब दो-चार होशियार मछलियां जाल में नहीं फंसतीं। ऐसी मछलियां नित्य जीव के समान हैं। किंतु अनेक मछलियां फंस जाती हैं, जिनमें से कुछ भागने की कोशिश करती हैं और सफल भी हो जाती हैं। वे मुक्तात्मा के समान हुईं। दो-चार मछलियां ऐसी भी होती हैं, जो जाल में फंसने के बाद भी उछलकर निकलने की चेष्टा करती हैं और आखिरकार मुक्त हो भी जाती हैं। उन्हें मुमुक्षु समझो। अंत में वे ही मछलियां जाल में फंसी रह जाती हैं, जो भागने की चेष्टा ही नहीं करतीं। सोचती हैं कि हमें क्या भय, हम तो आनंद में हैं, लेकिन बाद में उन्हें मछुआरा ले जाता है। इन्हें बद्ध समझो।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 3 मार्च, 1953

काहिरा में कम्युनिस्टों की धर-पकड़, साहित्य भी बरामद

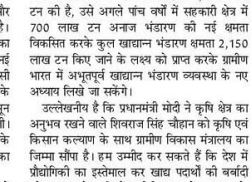

काहिरा में कम्युनिस्टों की घरपकड़, साहित्य भी बरामद

मिस्र की पुलिस के एक बड़े दल ने काहिरा नगर के बाहर की एक इमारत पर छापा मारकर 50 कम्युनिस्टों को गिरफ्तार कर लिया। इमारत के तहखानों से कम्युनिस्ट साहित्य और प्रचार का काफी सामान बरामद हुआ है।

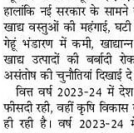

खाद्य महंगाई कम करने की चुनौती

मोदी सरकार ने अपने तीसरे कार्यकाल में कृषि परिदृश्य सुधारने की दिशा में काम शुरू कर दिया है। अनुकूल मानसून का अनुमान अच्छे संकेत हैं।

जयंतीलाल भंडारी

प्रतिबद्धता

मोदी सरकार ने अपने तीसरे कार्यकाल में कृषि परिदृश्य को संवारने की रणनीति पर काम करना शुरू कर दिया है। 18 जून को किसानों के खातों में पीएम किसान सम्मान निधि की 17वीं किस्त भेजी, तो 19 जून को खरीफ फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) को बढ़ाया है। हालांकि नई सरकार के सामने कृषि, ग्रामीण विकास, खाद्य वस्तुओं की महंगाई, घटी हुई कृषि विकास दर, गेहूं भंडारण में कमी, खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने और खाद्य उत्पादों की बर्बादी रोकने और किसानों के असंतोष की चुनौतियां दिखाई दे रही हैं।

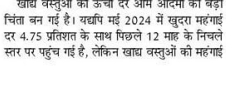

वित्त वर्ष 2023-24 में देश की विकास दर 8.2 फीसदी रही, वहीं कृषि विकास दर महज 1.4 फीसदी ही रही है। वर्ष 2023-24 में 3,280 लाख टन उत्पादित खाद्यान्न इसके पूर्ववर्ती वर्ष के रिकॉर्ड 3,290 लाख टन से कम है। एक साल में गेहूं की कीमतें 8-10 फीसदी बढ़ी हैं। अप्रैल 2024 में देश के गोदामों में गेहूं का भंडार घटकर 75 लाख टन रह गया है, जो पिछले 16 साल में भंडारण का सबसे निचला स्तर है। सरकार 1 जून, 2024 तक करीब 266 लाख टन गेहूं खरीद चुकी है, लेकिन लक्ष्य 372 लाख टन है। ऐसे में गेहूं आयात की स्थिति निर्मित हो रही है।

खाद्य वस्तुओं की ऊंची दर आम आदमी की बड़ी चिंता बन गई है। यद्यपि मई 2024 में खुदरा महंगाई दर 4.75 प्रतिशत के साथ पिछले 12 माह के निचले स्तर पर पहुंच गई है, लेकिन खाद्य वस्तुओं की महंगाई दर 8.69 प्रतिशत की ऊंचाई पर स्थित है। निस्संदेह कृषि एवं ग्रामीण विकास की विभिन्न चिंताओं के मद्देनजर ही प्रधानमंत्री मोदी ने पदभार संभालने के बाद अपना सबसे पहला कदम किसान कल्याण और कृषि क्षेत्र की प्रतिबद्धता की डगर पर आगे बढ़ाया है।

भारतीय मौसम विज्ञान विभाग (आईएमडी) का अनुमान है कि इस वर्ष मानसून अच्छा रहेगा। यह नई सरकार के लिए अच्छा संकेत है। प्रमुख मौसम एजेंसी स्काईमेट और भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के द्वारा कहा गया है कि इस वर्ष दक्षिण-पश्चिम मानसून के अच्छे रहने से कृषि गतिविधियों में तेजी आएगी। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के अनुसंधान विभाग के मुताबिक, अच्छे मानसून से दाल, तिलहन, अनाज का उत्पादन बढ़ेगा और इनकी कीमतें कम होंगी।

महंगाई के प्रबंधन के लिहाज से खाद्य उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ खाद्य उपजों की बर्बादी रोकने से महंगाई पर अंकुश लगेगा। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के खाद्य फसलों की बर्बादी संबंधी आंकड़ों के अनुसार, भारत में हर साल करीब 15 फीसदी खाद्य उत्पादन नष्ट हो जाता है। इतनी ही बर्बादी फल और सब्जियों की होती है। कृषि भंडारण के बुनियादी ढांचे में सुधार से कृषि उपज बर्बादी को कम करने में मदद मिल सकती है। देश की अधिक शीत भंडार गृह और प्रशीतन सुविधाओं की दिशा में आगे बढ़ना होगा। भारत में करीब 30 फीसदी सड़कें कच्ची हैं, जिससे कृषि पैदावार को मंडियों तक ले जाने में काफी समय लगता है। इससे कुछ पैदावार खराब हो जाती है, जिसका असर कीमतों पर पड़ता है। इसलिए फसल बर्बादी रोकने पर जोर देना चाहिए। देश में खाद्यान्न भंडारण की क्षमता फिलहाल 1,450 लाख टन की है, उसे अगले पांच वर्षों में सहकारी क्षेत्र में 700 लाख टन अनाज भंडारण की नई क्षमता विकसित करके कुल खाद्यान्न भंडारण क्षमता 2,150 लाख टन किए जाने के लक्ष्य को प्राप्त करके ग्रामीण भारत में अभूतपूर्व खाद्यान्न भंडारण व्यवस्था के नए अध्याय लिखे जा सकेंगे।

उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री मोदी ने कृषि क्षेत्र का अनुभव रखने वाले शिवराज सिंह चौहान को कृषि एवं किसान कल्याण के साथ ग्रामीण विकास मंत्रालय का जिम्मा सौंपा है। हम उम्मीद कर सकते हैं कि देश में प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल कर खाद्य पदार्थों की बर्बादी को कम करने, कृषि में मशीनीकरण को बढ़ाए जाने, जलवायु अनुकूल कृषि-खाद्य प्रणाली अपनाने, अधिक ग्रामीण कच्ची सड़कों को मंडियों से जोड़ने, कृषि भंडारण के बुनियादी ढांचे में क्षमता सुधार जैसी नीतिगत प्राथमिकताओं के साथ-साथ आपूर्ति शृंखला में सुधार से खाद्य फसलों की कीमतों में उतार-चढ़ाव को रोकने की नई रणनीति के साथ आगे बढ़ा जाएगा। किसानों के असंतोष का निराकरण करने और उनकी आमदनी बढ़ाने की रणनीति पर भी नई सरकार से काम करने की उम्मीद है।

कल्पमेधा

अपना नाम सदा कायम रखने के लिए मनुष्य बड़े से बड़ा जोखिम उठाने, धन खर्च करने, हर तरह के कष्ट सहने और यहां तक कि कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाता है।
– सुकरात

आतंक के विरुद्ध

वैश्विक स्तर पर लोकतंत्र की बात और अपने देश में प्रकारांतर से आतंकवाद का समर्थन और महिमामंडन मानो कनाडा की फितरत होती जा रही है। पिछले कुछ समय से यह लगातार देखा जा रहा है कि एक ओर कनाडा भारत के साथ द्विपक्षीय सहयोग का संबंध मजबूत करने की दुहाई देता है और दूसरी ओर वह भारत के खिलाफ आतंकी तत्त्वों को संरक्षण देता है, उनके लिए सहानुभूति का सार्वजनिक प्रदर्शन करता है। हालांकि कनाडा के इस चेहरे को समझना अब मुश्किल नहीं रह गया है और एक तरह से यह भारत के लिए सजग रहने का वक्त है। यही वजह है कि आतंकवादियों के प्रश्रय देने के कनाडा के रुख के मद्देनजर अब भारत ने भी स्पष्ट प्रतिक्रिया देना शुरू कर दिया है। वर्ष 1985 के कनिष्क बम विस्फोट की उनतालीसवीं बरसी पर कनाडा में आतंकवाद का महिमामंडन करने वाली गतिविधियों को निंदनीय करार देते हुए भारत ने साफ शब्दों में कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसी कार्रवाइयों को वहां इजाजत दी जाती है, जबकि शांतिप्रिय देशों और लोगों की ओर से आतंकवादी गतिविधियों की निंदा की जानी चाहिए।

गौरतलब है कि कनिष्क बम विस्फोट की घटना में एअर इंडिया के विमान में सवार तीन सौ उनतीस लोगों की जान चली गई थी। मरने वालों में ज्यादातर भारतीय मूल के कनाडाई थे। माना जाता है कि उस समय के खालिस्तान समर्थक आतंकवादी तत्त्व कनिष्क बम विस्फोट की घटना के लिए जिम्मेदार थे। इसके बावजूद कनाडा पर खालिस्तान समर्थकों को संरक्षण देने के आरोप लगते रहे हैं। आमतौर पर कनाडा इन आरोपों से इनकार करता रहा है, मगर वह इस सवाल का जवाब नहीं दे पाता कि अगर वह आतंकवाद में विश्वास रखने वालों को प्रश्रय नहीं देता है तो वहां की संसद तक में किसी खालिस्तानी तत्त्व की याद में गतिविधियां क्यों आयोजित होती हैं। हाल ही में खालिस्तानी चरमपंथी हरदीप सिंह निज्जर की याद में कनाडा की संसद में 'एक मिनट का मौन' रखा गया था, जिसकी भारत ने तीखी आलोचना की थी।

विचित्र यह है कि कनाडा की ओर से भारत के साथ कई मुद्दों पर साथ होने और आर्थिक-राष्ट्रीय सुरक्षा पर चर्चा करने की दुहाई दी जाती है और साथ ही वहां की संसद में खालिस्तान समर्थकों की हिमायत में 'एक मिनट का मौन' रखा जाता है। सवाल है कि दूसरे देशों में लोकतंत्र की लड़ाई का पक्ष लेने के दावे के समांतर कनाडा किस तर्क पर अपने देश में अलगाववादी तत्त्वों को संरक्षण देता है, उनके प्रति सहानुभूति का रुख रखता है। क्या वह इस तथ्य से अनजान है कि इस मसले पर भारत के सामने कैसी चुनौतियां खड़ी हैं? क्या यह परोक्ष रूप से भारत जैसे देश की संप्रभुता में दखल नहीं है? यह रवैया रखते हुए कनाडा भारत के साथ किस तरह के सहयोग की अपेक्षा करता है? यह ध्यान रखने की जरूरत है कि आतंकवाद किसी तरह की सीमा, राष्ट्रीयता या नस्ल का खयाल नहीं करता और यह एक ऐसी चुनौती है, जिससे अंतरराष्ट्रीय समुदाय को मिल कर निपटने की जरूरत है। विश्व में ऐसे भी उदाहरण रहे हैं कि अगर किसी देश ने अपने सीमा-क्षेत्र में आतंकवाद को पलने-बढ़ने का मौका दिया, उसे प्रश्रय दिया, तो बाद में खुद उसे ही आतंकवाद का पीड़ित और भुक्तभोगी होना पड़ा। कनाडा आतंक का महिमामंडन करके न केवल भारत के सामने जटिल हालात पैदा करने की कोशिश करता है, बल्कि वह अपने भविष्य के लिए भी मुश्किलों की पृष्ठभूमि तैयार कर रहा है।

तकनीक का संजाल

आज के दौर में आधुनिकता का एक पैमाना यह भी प्रचारित किया गया है कि कोई व्यक्ति नई तकनीकी का कितना इस्तेमाल करता है। इस धारणा की जद में वे तमाम लोग हैं, जो जरूरत होने पर या फिर गैरजरूरी तरीके से तकनीक पर निर्भर हो चुके हैं। विडंबना यह है कि इस धारणा का आकर्षण बच्चों को भी अपने दायरे में ले चुका है और उनके कोमल मन-मस्तिष्क को बुरी तरह प्रभावित कर रहा है। अरुणाचल प्रदेश के एक स्कूल में जब एक पंद्रह वर्षीय किशोर को मोबाइल फोन का इस्तेमाल करने की वजह से स्कूल छोड़ने को कहा गया, तो उसके बाद किशोर के आत्महत्या कर लेने की खबर आई। सवाल उठता है कि आए दिन स्मार्टफोन की लत की वजह से बच्चों के भीतर अप्रत्याशित प्रतिक्रिया होने की खबरें आने के बावजूद स्कूल प्रबंधन ने संवेदनशील तरीके से इस मसले का हल निकालना जरूरी क्यों नहीं समझा? स्कूल में मोबाइल का उपयोग प्रतिबंधित होने के बाद भी अगर वह किशोर ऐसा कर रहा था तो यह उसकी मानसिक परिस्थितियों या लत का नतीजा हो सकता है। इस स्थिति में उसे हिदायत देने के क्रम में मनोवैज्ञानिक पहलुओं का ध्यान रखा जाना चाहिए था।

सच यह है कि आज बच्चों और किशोरों के भीतर अगर स्मार्टफोन देखने को लेकर अतिरेक की हद तक व्यस्तता देखी जा रही है तो इसका कारण मनोविज्ञान ही है। सिमटे परिवार और कामकाजी व्यस्तता के दौर में बच्चों के साथ घुलने-मिलने और खेलने के लिए अभिभावकों के पास समय नहीं है और बच्चों के हाथ में स्मार्टफोन देकर अभिभावक सोचते हैं कि उनका बच्चा आधुनिक और अद्यतन हो रहा है। मगर उसे जरूरत या फिर गैरजरूरी होने पर भी लगातार देखते रहने पर बच्चे का कोमल मन-मस्तिष्क एक तरह के सम्मोहन का शिकार हो जाता है और उसी से उसकी मानसिक परिस्थितियां संचालित होने लगती हैं। वह मोबाइल के स्क्रीन के प्रभाव में इस हद तक आ जाता है कि उसे छोड़ने पर उसका विवेक काम करना बंद कर सकता है और ऐसी स्थिति में कई बार वह खुद को नुकसान पहुंचा लेता है। इसलिए अगर कोई बच्चा इस परेशानी का शिकार हो तो उसके प्रति सख्ती के बजाय संवेदनशील और मनोवैज्ञानिक तौर-तरीकों का सहारा लेना चाहिए।

मुसीबत बनते वातानुकूलन संयंत्र

एक रपट के अनुसार, भारत में वातानुकूलन संयंत्रों के उपयोग में इतनी तेजी से बढ़ोतरी हो रही है कि वर्ष 2022 तक भारत में इनकी संख्या पूरी दुनिया की कुल वातानुकूलन इकाइयों की संख्या का चौथाई हिस्सा हो चुकी है।

रामानुज पाठक

आज बेतहाशा बढ़ते तापमान से राहत का आसन तरीका वातानुकूलन यंत्र या एअरकंडीशनर यानी एसी को माना जाता है। एसी का वैश्विक बाजार प्रतिवर्ष बहुत तेजी से बढ़ रहा है। मगर यह सुविधा एक पारिस्थितिक आपदा बनती जा रही है। एसी का बढ़ता उपयोग ऊर्जा, पर्यावरण और स्वास्थ्य तीनों के लिए संकट बनता जा रहा है। 'वर्ल्ड एनर्जी आउटलुक' की एक रपट के अनुसार भारत में अब हर सौ में चौबीस परिवारों के पास एसी हैं। रपट के अनुसार भारत विश्व का सबसे तेजी से बढ़ता एसी बाजार है।

पिछले तेरह वर्ष में 65 फीसद नए एसी छोटे शहरों में लगाए गए हैं। देश में एसी इस्तेमाल करने वाले परिवार 2010 से 2023 के बीच तीन गुना हो गए हैं। एसी, फ्रिज और स्पेस कूलिंग की जरूरतें बढ़ने के साथ ही अब पर्यावरण पर उनके प्रभाव को लेकर चिंताएं भी उभर रही हैं। पर्यावरण विशेषज्ञों ने बार-बार बताया है कि जैसे-जैसे अधिक 'कूलिंग' उपकरण लगाए जाते हैं, वातावरण में गर्मी भी उसी हिसाब से बढ़ती जाती है। इस वर्ष भारत का घरेलू बाजार करीब 1.1 करोड़ एसी का हो गया है। अभी चीन का बाजार करीब नौ करोड़ एसी का है। 2045-2050 तक भारत एसी उपयोग में चीन से आगे निकल जाएगा। एसी से बिजली की खपत चार साल में इक्कीस फीसद तक बढ़ चुकी है।

वातानुकूलन यंत्र या एसी के अतिशय इस्तेमाल से पर्यावरण को बड़े खतरे का अंदेशा है। हाइड्रोफ्लोरो कार्बन (एचएफसी) इसमें इस्तेमाल की जाने वाली मुख्य गैस है। यह ओजोन परत को नुकसान पहुंचा रही है। भारत ने एचएफसी को चरणबद्ध तरीके से कम करने के लिए 'मांट्रियल प्रोटोकाल' के तहत किगाली संशोधन पर दस्तखत कर रखे हैं। मगर, 'कूलिंग' उपकरणों का इस्तेमाल लगातार बढ़ने की वजह से यह लक्ष्य मुश्किल हो गया है। एक रपट के अनुसार, भारत में वातानुकूलन यंत्रों के उपयोग में इतनी तेजी से बढ़ोतरी रही है कि वर्ष 2022 तक भारत में इनकी संख्या पूरी दुनिया की कुल वातानुकूलन इकाइयों की संख्या का चौथाई हिस्सा हो चुकी है। 'रेफ्रिजरेंट', जिनका प्रयोग कूलिंग के लिए किया जाता है, वैश्विक ताप के लिए प्रमुख कारकों में से एक है और अगर इन्हें नियंत्रित नहीं किया गया तो ये वैश्विक तपिश में 0.5 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि कर सकते हैं। 'राकी माउंटेन इंस्टीट्यूट' द्वारा तैयार की गई 'साल्विंग द ग्लोबल कूलिंग चैलेंज' नामक रपट के अनुसार, एक ऐसे तकनीकी समाधान की आवश्यकता है, जो इस प्रभाव को 1/5 हिस्से तक कम करने में मदद करे और वातानुकूलन इकाइयों के संचालन के लिए आवश्यक बिजली की मात्रा में 75 फीसद तक कमी सुनिश्चित कर सके।

दरअसल, एचएफसी को हटाना भारत जैसे पर्यावरण हितैषी देश की प्राथमिकता में रहा है। भारत उन 107 देशों में से एक है, जिन्होंने वर्ष 2016 में उस समझौते पर हस्ताक्षर किए थे, जिसका उद्देश्य वर्ष 2045 तक एचएफसी गैस को काफी हद तक कम करना और वर्ष 2050 तक वैश्विक तापमान में होने वाली 0.5 डिग्री सेल्सियस की संभावित वृद्धि को रोकने के लिए कदम उठाना था। यूरोप में 2023 की शुरुआत से ही

'फ्लोरिनेटेड' गैसों के इस्तेमाल को धीरे-धीरे बंद करने की शुरुआत हो चुकी है। इन गैसों में हाइड्रोफ्लोरो कार्बन, परफ्लोरो कार्बन, सल्फर हेक्साफ्लोराइड और नाइट्रोजन ट्राइफ्लोराइड 'एफ गैसों' में ही आती हैं। एफ गैसें एल्युमिनियम प्रसंस्करण के समय भारी मात्रा में बनती हैं। इनका

> **अस्पतालों, बहुमंजिला इमारतों और बड़े व्यावसायिक परिसरों या माल में केंद्रीकृत एसी की व्यवस्थाएं हैं, जो पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को बेहद नुकसान पहुंचा रहे हैं। एसी से निकलने वाली ठंडी हवा विभिन्न श्वसन संबंधी समस्याएं पैदा कर सकती है, जैसे जकड़न, गला सूखना और खांसी, खासकर अस्थमा या एलर्जी वाले व्यक्तियों में। एसी में लंबे समय तक रहने से हम सुस्त और ऊर्जाहीन महसूस कर सकते हैं। ठंडा तापमान हमारी चयापचय दर को कम और शरीर की प्राकृतिक प्रक्रियाओं को धीमा कर सकता है। ताजा हवा के संचार की कमी से थकान और उनींदापन पैदा हो सकता है।**

इस्तेमाल वातानुकूलन यंत्रों, रेफ्रिजेरटर, हीट पंप, एअरोसोल और प्रेशर छिड़काव में किया जाता है। एफ गैसें अन्य ग्रीनहाउस गैसों के मुकाबले ज्यादा तापमान सोखती हैं। वैज्ञानिकों के मुताबिक, एफ गैसें हमारे वायुमंडल में करीब पचास हजार वर्ष तक बनी रह सकती हैं। इन्हें लेकर आमतौर पर ज्यादा चर्चा नहीं होती है। भारत, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप एचएफसी के उपयोग में 2045 तक 85 फीसद तक कमी लाने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

आज अस्पतालों, बहुमंजिला इमारतों और बड़े व्यावसायिक परिसरों या माल में केंद्रीकृत एसी की व्यवस्थाएं हैं, जो पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को बहुत नुकसान पहुंचा रहे हैं। एसी से निकलने वाली ठंडी हवा विभिन्न श्वसन संबंधी समस्याएं पैदा कर सकती है, जैसे जकड़न, गला सूखना और खांसी, खासकर अस्थमा या एलर्जी वाले व्यक्तियों में। एसी के सबसे प्रचलित दुष्प्रभावों में से एक सूखी आंखें हैं। एसी कमरे में नमी के स्तर को कम कर देता है। इससे हमारी आंखों में नमी अधिक तेजी से वाष्पित हो जाती है, जिससे सूखापन, खुजली और असुविधा होती है। एसी में लंबे समय तक रहने से हम सुस्त और ऊर्जाहीन महसूस कर सकते हैं। ठंडा तापमान हमारी चयापचय दर को कम और हमारे शरीर की प्राकृतिक प्रक्रियाओं को धीमा कर सकता है। ताजा हवा के संचार की कमी से थकान और उनींदापन पैदा हो सकता है। ठंडी, शुष्क हवा के लंबे समय तक संपर्क में रहने से साइनस में जमाव हो सकता है और माइग्रेन बढ़ सकता है। एलर्जी या अस्थमा से पीड़ित लोगों की वातानुकूलित वातावरण में परेशानी बढ़ सकती है।

वातानुकूलन प्राणाली धूल, पराग और मोल्ड जैसे एलर्जी के लिए प्रजनन स्थल हो सकती है। अगर ठीक से रखरखाव न किया जाए, तो यह एलर्जी हवा में फैल और छींकने, खांसने, आंखों से पानी आने, नाक बंद होने जैसी समस्याओं को बढ़ा सकती है। एलर्जी और अस्थमा से पीड़ित व्यक्ति विशेष रूप से एसी के प्रति संवेदनशील होते हैं। एसी ध्वनि प्रदूषण में भी योगदान दे सकता है। लगातार उच्च स्तर के शोर के संपर्क में रहने से नींद में खलल पड़ सकता है, तनाव का स्तर बढ़ सकता है और समग्र स्वास्थ्य में गिरावट आ सकती है।

वातानुकूलन प्रणाली संभावित रूप से संक्रामक रोगों के प्रसार में योगदान दे सकती है। गौरतलब है कि कोविड महामारी में एसी में रहने वाले लोगों पर कोविड विषाणु का संक्रमण तेजी से हुआ था। एसी अनजाने में घर के भीतर वायु प्रदूषण में योगदान दे सकता है। बंद जगहों में हवा के घूमने से धूल, पालतू जानवरों के बाल, वाष्पशील कार्बनिक यौगिक और हवा में मौजूद रसायन जैसे प्रदूषक जमा हो सकते हैं। इन प्रदूषकों को सांस के जरिए अंदर लेने से श्वसन संबंधी जलन, एलर्जी और अन्य स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं हो सकती हैं। एसी में बैठने से शारीरिक तापमान कृत्रिम तरीके से ज्यादा कम हो जाता है, जिससे कोशिकाओं में संकुचन होता है और सभी अंगों में रक्त का संचार बेहतर तरीके से नहीं हो पाता, जिससे शरीर के अंगों की क्षमता प्रभावित होती है। एसी का तापमान बहुत कम होने पर मस्तिष्क की कोशिकाएं भी संकुचित होती हैं, जिससे मस्तिष्क की क्षमता और क्रियाशीलता प्रभावित होती है। ऐसे में आखिर एसी का विकल्प क्या है? वृक्षारोपण कार्यक्रम पर विशेष ध्यान देकर एसी पर निर्भरता कम की जा सकती है, क्योंकि वृक्ष प्राकृतिक रूप से तापमान में गिरावट लाते हैं। इमारतों के निर्माण में एसी पर निर्भरता कम की जा सकती है।

गुमसुम होता बचपन

दुनिया मेरे आगे

अशोक कुमार

सामाजिक परिवेश के अनेक आयामों में पारिवारिक परिधि सबसे लघु इकाई मानी जाती है, जिसके ताने-बाने की डोर परिवार के समस्त सदस्यों को किसी न किसी रूप में बांधे रखती है। कभी घर-आंगन के सभी सदस्यगण अपनी अपनी जिम्मेवारी के बंधन को बखूबी निभाते थे और वे एक स्वतःस्फूर्त अनुशासन के आभामंडल से जुड़े रहते थे। संयुक्त परिवार के सभी सदस्य एक दूसरे से हिल-मिल कर सामंजस्य बिठाते हुए आत्मीय तरंग बिखेरते थे, जिसके कारण परिवार में अमन-चैन कायम रहता था। दादा-दादी, मां-पिता, चाचा-चाची, भाई-बहन, पति-पत्नी आदि संबंधों में परस्पर सद्भाव और समझदारी की गंगा बहती थी। बचपन में सुबह-सुबह पाठशाला न जाने के बहाने बनाने पर मां-चाची बहला-फुसला कर स्कूल जाने को विवश कर देते थे।

बदलते समय ने आज बहुत कुछ हालात को भाग-दौड़ की गति से आबद्ध कर दिया है। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भले औसत रूप में मानवीय दिनचर्या सामान्य है, लेकिन नगरीय रहन-सहन में विशेषकर एकल परिवार को बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। परिवार में सीमित संसाधनों की उपलब्धता और भौतिक आवश्यकताओं की ओर मन की व्यग्र इच्छा ने पारिवारिक आंगन में वैचारिक कोलाहल मचा रखा है। सहनशीलता की घोर कमी ने भी परिवार में छोटी-मोटी बातों पर तनाव और मनमुटाव की झड़ी लगा रखी है।

ऐसी स्थिति आमतौर पर अब लगभग हर घर में देखी जा रही है, जहां विशेषकर किशोर अपने माता-पिता के बीच गुस्से में हुई बहस या लड़ाई झगड़े के समय सन्नाटे में जाकर चुपचाप बैठ जाते हैं। उस समय उनके मानसिक आवेग बड़े ही संवेदनशील होकर उनके चिंतन तंत्र को कुप्रभावित करते हैं। इस हालात में उन्हें भावनात्मक और संज्ञानात्मक रूप से कमजोरी के दौर से गुजरने की बाध्यता होती है और यह स्थिति उनके मस्तिष्क पर दीर्घकालिक असर छोड़ती है। उनके अंदर बाल मन की गतिशीलता की नैसर्गिक प्रतिभा विचलन की ओर जाती दिखती है। टकराव या गुस्से में माता-पिता की चिल्लाहट की गूंज बच्चों के कान में कम, बल्कि उनके दिमाग पर अधिक असर डालती है। उनके मन में एक भय की रेखा खींच जाती है और वे कल्पना करने लगते हैं कि कहीं मां-पिता उन्हें छोड़कर अन्यत्र न चले जाएं। ऐसी कुछ घटनाएं होती भी हैं। बाल मन का अध्ययन करने वाले मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि इस स्थिति में बच्चे नकारात्मकता के शिकार हो जाते हैं और उनकी पढ़ाई-लिखाई प्रभावित होती है। बच्चों के सामने मां-पिता की अस्वस्थ बहस उनकी सुरक्षा की भावना को खतरे में डालती है, जिसके कारण व्यवहार-कौशल को प्राकृतिक आचरण नहीं मिलने से बच्चे का विकास भी अवरुद्ध हो जाता है।

> **स्नेह, वात्सल्य और समुचित देखभाल की प्राकृतिक जिम्मेवारी से मुक्त होने के कारण बहुत सारे बच्चे वर्तमान समय में मोबाइल में अपना भविष्य तलाशने लगते हैं। उनकी नींद के साथ-साथ पढ़ाई और भूख भी किसी न किसी रूप में प्रभावित होती है।**

आपस में लड़ाई में व्यस्त माता-पिता को यह ज्ञात नहीं हो पाता कि उनके इस आचरण से बच्चों में अपराध बोध में वृद्धि और आत्मविश्वास की कमी होने लगती है। उक्त हालात में बच्चे मां-पिता की उग्रता को भी सीखते हैं जो धीरे-धीरे उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाने का मार्ग प्रशस्त करते हुए उसे तुनकमिजाज बना देता है। इस हालत से अक्सर गुजरने के कारण जब बच्चे अपनी वर्तमान वास्तविकता से असहज और असामान्य होते हैं तो वे दयनीय अवस्था धारण कर आत्महीनता और अंतर्मुखी बन जाने के शिकार होते हैं। सबसे खराब प्रभाव यह पड़ता है कि बच्चे भय के कारण अपने मां-पिता से खुलकर बात करने की मनोदशा से मुक्त होकर झूठ बोलने के सहारे से बंध जाते हैं और उनका कोमल बचपन कहीं खो जाता है। बड़े होकर यही बच्चे घर के प्रतिकूल माहौल के चलते अपने साथियों की शरण में जाकर विभिन्न किस्म की कुप्रवृत्तियों के संवाहक बनते हैं।

घर में परिवार के बीच या माता-पिता के विवाद से उत्पन्न स्थिति में बच्चों की चंचलता, उल्लास, बाल सुलभ गतिविधियां नेपथ्य नभ में विचरण करने लगते हैं। चूंकि घर-आंगन बच्चों की प्राथमिक पाठशाला है, जहां वे अच्छी-बुरी आदतों को ग्रहण करते हैं, इसलिए ज्यादातर बच्चे अपने अभिभावक की गलत हरकतों से समाज के अन्य अपनाने योग्य अच्छी आदतों से वंचित भी हो जाते हैं। स्नेह, वात्सल्य और समुचित देखभाल की प्राकृतिक जिम्मेवारी से मुक्त होने के कारण बहुत सारे बच्चे वर्तमान समय में मोबाइल में अपना भविष्य तलाशने लगते हैं। उनकी नींद के साथ-साथ पढ़ाई और भूख भी किसी न किसी रूप में प्रभावित होती है। सवाल है कि इस प्रतिकूल दिशा और दशा की ओर प्रस्थान करते किशोर के भविष्य को कैसे संभाला जाए। इसके लिए मुख्य उत्तरदायित्व बच्चों के मां-पिता का ही है। दुर्गति की ओर जाती नव-संतति को अगर उनके माता-पिता अपने अहम और क्रोध को नियंत्रित कर सामान्य दांपत्य जीवन नहीं जिएंगे, तब तक दुनिया की कोई ताकत इस पीढ़ी को बचाने में असमर्थ होगी।

परिवार की बिखरती पाठशाला के दुष्परिणाम जीवन के हर क्षेत्र में देखा जा रहा है, जिसकी रक्षा में मुख्य रूप से माता-पिता को सामने आकर आपसी मतभेद और कटुता का विसर्जन करने की जरूरत है। उन्हें यह खयाल रखना चाहिए कि उनके आचरण उनके घर-आंगन की वाटिका के बच्चों के भविष्य को अंधकार में धकेल रहे हैं।

सुरक्षा की पटरी

पश्चिम बंगाल में हुई रेल दुर्घटना जितनी दुखद है, उतनी ही विचारणीय भी। देश में प्रतिदिन करोड़ों लोग रेलगाड़ियों में सफर करते हैं। ऐसे में रेलवे को अत्यधिक सुरक्षित बनाने वाली तकनीक का होना बेहद जरूरी है। देश की प्रत्येक ट्रेनों में कवच प्रणाली लगाना आवश्यक है, जिससे ट्रेनों की संभावित आपसी टक्कर को रोका जा सकता है। रेलवे के आधुनिकीकरण और उच्च गति की गाड़ियां चलाने से पहले रेलवे और सरकार को रेलवे का सुरक्षा तंत्र मजबूत करना होगा। हैरानी की बात है कि जिस 'कवच' प्रणाली को रेल दुर्घटनाएं रोकने में बेहद प्रभावी माना जा रहा है, उसे अभी तक देश के समूचे रेल नेटवर्क के महज दो फीसद हिस्से में लागू किया जा सका है। इसके अलावा, दोषपूर्ण पटरियों का पता लगाने और उन्हें हटाने के लिए एक अल्ट्रासोनिक जांच का उपयोग किया जाना चाहिए। यह तकनीक एक गैर-विध्वंसक परीक्षण पद्धति है, जो पटरियों में ऐसी दरारों, दोषों या खामियों का पता लगाने के लिए उच्च आवृत्ति ध्वनि तरंगों का उपयोग करती है, जो गाड़ी के पटरी से उतरने या ऐसी अन्य दुर्घटनाओं का कारण बन सकती हैं।

– अंकित सोनी 'आदित्य', धार, मप्र

भविष्य की खातिर

भारत में परीक्षा से पहले प्रश्नपत्रों का लीक हो जाना और परीक्षा में गड़बड़ी होने के चलते भर्तियों को निरस्त करने का एक रिवाज-सा बन गया है। ऐसी धांधलियां हमारे देश के लाखों बच्चों की प्रतिभा का मजाक उड़ाती नजर आ रही है। दायित्वपूर्ण पदों पर बैठे राजनेता और व्यवस्था में बैठे हुए उच्च अधिकारी इस संबंध में अपनी कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर पा रहे हैं। पिछले दिनों नीट परीक्षा में गड़बड़ी की खबरों ने पूरे भारत में एनटीए (राष्ट्रीय परीक्षा एजंसी) की कार्यप्रणाली और उसकी भूमिका पर सवाल खड़े कर दिए। प्रश्नपत्रों का परीक्षा से पहले अन्य लोगों तक पहुंच जाना हमारी कार्य प्रणाली को कठघरे में खड़ा करता है। जांच और छानबीन में जो कोई भी दोषी पाया जाता है उस पर कड़ी से कड़ी कार्रवाई अमल में लाई जानी चाहिए, ताकि भविष्य में इस प्रकार की गलतियों से बचा जा सके और लाखों विद्यार्थियों के भविष्य को सुरक्षित किया जा सके।

– मदन चंबियाल, शिमला

कूटनीति की बिसात

यूक्रेन पर रूस के हमले के बाद पश्चिमी देशों को लगा कि वे प्रतिबंध लगा कर वैश्विक मंच पर रूस को अलग-थलग कर देंगे, मगर ऐसा नहीं हुआ। भारत और चीन लगातार कूटनीतिक स्तर पर रूस का साथ देते रहे। साथ ही प्रतिबंधों को दरकिनार करते हुए रूस से भारी मात्रा में कच्चा तेल आयात करके उसे आर्थिक मजबूती प्रदान करते रहे। इस बीच रूस चीन का और ज्यादा प्रगाढ़ आर्थिक एवं रणनीतिक साझेदार बन गया है। इस सबसे उत्साहित रूस ने अब उत्तरी कोरिया के साथ महत्त्वपूर्ण सामरिक समझौता किया है। भारत के दृष्टिकोण से देखें तो यह अच्छी स्थिति नहीं है। भविष्य में भारत-चीन संघर्ष में रूस किसका साथ देगा? दक्षिण कोरिया से भारत के समृद्ध रिश्ते हैं। ऐसे में उत्तर कोरिया के मामलों में भारत वैश्विक मंचों पर रूस के खिलाफ जाएगा या दक्षिण कोरिया के खिलाफ? शायद भारत की बीच के रास्ते वाली कूटनीति को भविष्य में कड़े इम्तिहान देने पड़ें।

– बृजेश माथुर, गाजियाबाद

विपक्ष की आवाज

सभी भारतीयों को गौरवान्वित होना चाहिए कि लोकतंत्र लगातार मजबूत हुआ है और संसदीय प्रणाली के माध्यम से भारत में राजकाज सुचारु रूप से चल रहा है। भारत के 543 सांसदों से देश यह जरूर अपेक्षा करता है कि अपने क्षेत्र के मुद्दों को जरूर उठाएं, लेकिन जब बात राष्ट्र की सुरक्षा और मान-सम्मान की आती है तो सभी सांसदों को पूरे विश्व में एकरूपता और एकजुटता का संदेश जरूर देना चाहिए। उम्मीद है कि सभी सांसद मर्यादित आचरण करते हुए करते हुए देश की सेवा करेंगे। केंद्र सरकार से यह भी अपेक्षा की जानी चाहिए कि वह कानून एवं योजनाओं को लागू करते समय निष्पक्षता का परिचय दे और क्षेत्रवाद से उठकर देश के सभी लोकसभा क्षेत्र में प्रगति सुनिश्चित करें। विपक्षी दलों की भी जिम्मेदारी है कि वे एक मजबूत विपक्ष की भूमिका निभाएं।

– वीरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

www.readwhere.com

पायनियर
नई दिल्ली, बृहस्पतिवार, 27 जून, 2024

नई लोकसभा

पहला सत्र

नई 18वीं लोकसभा का पहला सत्र बड़ी उम्मीदों के साथ शुरू हुआ। 18वीं लोकसभा का बहु-प्रतीक्षित उद्‌घाटन सत्र 24 जुलाई को शुरू हुआ। यह भारत के लोकतांत्रिक इतिहास में मील का पत्थर है। थोड़े कम बहुमत से 'राजग' की सत्ता में वापसी हुई है, पर 17वीं लोकसभा की तुलना में सदन बहुत संतुलित है जब 'राजग' का प्रचंड बहुमत था। लेकिन अब राजनीतिक परिदृश्य काफी बदल गया है जो नई लोकसभा के कामकाज में दिखाई देगा। वास्तव में इस सत्र की प्राथमिकतायें अगले पांच साल के लिए भारत का मार्ग निर्धारित करेंगी। 18वीं लोकसभा का पहला सत्र पहले ही दिन विवादों में घिर गया। 'इंडिया' समूह के नेताओं ने सोमवार को संसद में विरोध प्रदर्शन किया, जबकि उस समय संसद के नव-निर्वाचित सदस्यों का शपथ ग्रहण चल रहा था। कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिार्जुन खड़गे, पार्टी नेता सोनिया गांधी तथा समाजवादी पार्टी नेता अखिलेश यादव जैसे प्रमुख नेताओं ने भाजपा नीत 'राजग' सरकार के खिलाफ प्रदर्शन करते हुए संविधान की प्रतियां लहराईं। अन्य केन्द्रीय मंत्रियों तथा नव-निर्वाचित सांसदों का शपथ ग्रहण प्रोटेम अध्यक्ष भतृहरि महताब द्वारा कराया गया। 'इंडिया' समूह के जो कांग्रेस सदस्य संसदीय समिति में शामिल थे, उन्होंने नव-निर्वाचित सांसदों की शपथ ग्रहण प्रक्रिया में सहायता देने से इनकार कर दिया। उन्होंने प्रोटेम अध्यक्ष के रूप में भाजपा सांसद भतृहरि महताब की नियुक्ति का विरोध किया और वे अपने पसंदीदा उम्मीदवार आठ बार के सांसद कांग्रेसी के. सुरेश को इस पद पर लाना चाहते थे। हालांकि, सुरेश के रिकार्ड में व्यवधान है, जबकि भाजपा सांसद भर्तहरि

महताब लगातार सात बार सांसद रहे हैं। भाजपा ने इसे उनकी पसंद का कारण माना और राष्ट्रपति ने भी इसे स्वीकार किया है। यह पहला संकेत है कि लोकसभा में सत्तापक्ष एवं विपक्ष के बीच टकराव के कारण कामकाज सुचारु रूप से नहीं चलेगा।
18वीं लोकसभा का पहला सत्र 3 जुलाई तक जारी रहेगा। लोकसभा अध्यक्ष का चयन 26 जून को होना है। इसके बाद राष्ट्रपति मुर्मू दोनों सदनों के संयुक्त सत्र को 27 जून को संबोधित करेंगी। मजेदार बात है कि इस सत्र में एक दशक में पहली बार नेता विपक्ष की नियुक्ति होगी। इस सत्र के विवादास्पद होने की आशंका है क्योंकि विपक्ष भाजपा नीत 'राजग' को अनेक मुद्दों पर चुनौती देना चाहता है जिसमें 26 जून को अध्यक्ष का चुनाव, नीट-यूजी व यूजीसी-नेट परीक्षाओं के पेपर लीक तथा प्रोटेम अध्यक्ष की नियुक्ति पर विवाद शामिल हैं। विपक्ष का इरादा बढ़ती कीमतों, खाद्य मुद्रास्फीति, भयानक लू के कारण होने वाली मौतें तथा परीक्षायें संचालन करने में हालिया 'अनियमितताओं' जैसे मामले उठाना है। उम्मीद है कि 18वीं लोकसभा आर्थिक प्रगति को प्राथमिकता देते हुए मुद्रास्फीति पर नियंत्रण तथा रोजगार सृजन की दिशा में काम करेगी। नए सत्र से सामाजिक न्याय पर ध्यान केन्द्रित कर असमानता संबंधी मुद्दों पर गौर करते हुए आर्थिक प्रगति के लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुंचाने की उम्मीद है। इसके साथ ही जम्मू में हुए आतंकी हमलों को देखते हुए भारत के रणनीतिक हितों और सुरक्षा सरोकारों पर भी 18वीं लोकसभा में चर्चा होने की आशा है। देश के विभिन्न हिस्सों में सुरक्षा तथा कानून-व्यवस्था स्थापित करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इस सत्र से न केवल विधायी ढांचा तय होगा, बल्कि विविधतापूर्ण व गतिशील राष्ट्र की महत्वाकांक्षायें भी परिभाषित होंगी। भारत आज चुनौतीपूर्ण वैश्विक परिदृश्य में अपने लिए मजबूत व समतापूर्ण मार्ग तलाशने का प्रयास कर रहा है।

दिल्ली में जल संकट का कारण

प्राकृतिक संसाधनों के बेलगाम दोहन के साथ ही जल-संसाधनों के दुरुपयोग से दिल्ली व अन्य स्थानों पर गंभीर जल-संकट सामने आ रहा है।

उत्तम गुप्ता
(लेखक, नीति विश्लेषक हैं)

प्राकृतिक संसाधनों के बेलगाम दोहन के साथ ही जल-संसाधनों के दुरुपयोग से दिल्ली व अन्य स्थानों पर गंभीर जल-संकट सामने आ रहा है। दिल्लीवासियों के समक्ष व्याप्त गंभीर जल संकट को देखते हुए दिल्ली सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटा कर उसे हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र को अतिरिक्त जल सप्लाई कराने में सीधे हस्तक्षेप का अनुरोध किया है। शुरुआत में सर्वोच्च न्यायालय ने हिमाचल प्रदेश को प्रति दिन 70 मिलियन गैलन-एमजीडी पानी दिल्ली को देने का निर्देश दिया। उसने हरियाणा से भी अनुरोध किया है कि वह दिल्ली तक जल का सुचारु प्रवाह सुनिश्चित करे। लेकिन अब हिमाचल प्रदेश ने दावा किया है कि वह पहले से 70 एमजीडी पानी दे रहा है और इससे अधिक नहीं दे सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ने 'अपर यमुना रिवर बोर्ड-यूवाईआरबी को सभी पक्षों की एक बैठक बुलाने तथा तेजी से निर्णय लेने' का निर्देश दिया है।

यूवाईआरबी का काम उपलब्ध जल का लाभार्थी राज्यों में आबंटन नियमित करना तथा रिटर्न प्रवाह की निगरानी करना है। ऐसे में सवाल उठता है कि क्या दिल्ली में वास्तव में पानी की कमी है? दिल्ली की आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट, 2023 के अनुसार शहर की कुल जल आवश्यकता 1,290 एमजीडी प्रतिदिन है जिसमें गर्मी के महीनों में वृद्धि होती है। शहर में पानी सप्लाई के जिम्मेदार दिल्ली जल बोर्ड-डीजेबी ने 3 अप्रैल, 2024 को एक लिखित बयान में कहा था कि राजधानी में जल का उत्पादन मार्च अंत से अप्रैल प्रारम्भ तक लगभग 990 एमजीडी था। वास्तव में डीजेबी ने 7 जून, 2024 को 1,002 एमजीडी पानी उत्पादित किया था। दिल्ली के आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24 में कहा गया है 'डीजेबी के आउटकम बजट के अनुसार, कुल वितरण नुकसान लगभग 52.35 प्रतिशत है।' वितरण नुकसान का अर्थ टैंकर माफिया और उद्योगों द्वारा पानी की चोरी है। यह चोरी जल सप्लाई श्रृंखला के सभी चरणों पर होती है जिसें डब्लूटीपी, कन्वेंस सिस्टम तथा वितरण व्यवस्थायें शामिल हैं। बिना अधिकारियों की मिलीभगत के यह काम असंभव है।

इस प्रकार लगभग 1000 एमजीडी पानी में से 52 प्रतिशत चोरी का अर्थ है कि 520 एमजीडी पानी चोरी हो जाता है और दिल्ली के परिवारों को उपभोग के लिए 480 एमजीडी पानी मिलता है। यह 1290 एमजीडी मांग का केवल 37 प्रतिशत है। हालांकि, यह स्थिति आश्चर्यजनक है। क्योंकि यदि ऐसा होता तो दो तिहाई दिल्लीवासियों को पानी न मिलता और संपूर्ण विभीषिका पैदा हो जाती। लेकिन दिल्ली के अनेक भागों में लोगों की भीड़ के टैंकरों के पीछे दौड़ने की घटनाओं के बावजूद ऐसा नहीं है। इस प्रकार सरकार द्वारा आवश्यकता निर्धारित करने वाले अधिकारियों के तरीके में कोई मूलभूत गड़बड़ी है। आदर्श रूप से मांग का पता लगाने के लिए परिवारों का सर्वेक्षण कर डेटा एकत्र किया जाना चाहिए कि किसे कितनी आवश्यकता है। इसके बजाय वे अतीत, जैसे 2023-24 की कुल सप्लाई के आधार पर अनुमान लगा लेते हैं कि इतनी मात्रा का उपभोग हुआ और इसे प्रतिशत-वार बढ़ा कर 2024-25 का अनुमान लगाते हैं। इस प्रकार वे चोरी हुए पानी की मात्रा भी आवश्यकता में जोड़ लेते हैं। इसका अर्थ है कि 1250 एमजीडी में 520 एमजीडी चोरी वाला पानी भी शामिल था। इसे निकाल देने पर परिवारों की आवश्यकता 770 एमजीडी बचती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि 'टैंकर माफिया' द्वारा पानी की चोरी दिल्ली की जल समस्याओं की जड़ में है। यदि ऐसा न होता तो कुल 1000 एमसीडी पानी घरेलू उपभोग के लिए उपलब्ध होता। इससे वर्तमान समय में अनुभव किसी कमी की बात तो दूर 230 एमसीडी पानी अतिरिक्त होता। दिल्ली की जल समस्या का टिकाऊ समाधान यही है कि राज्य सरकार पानी की चोरी से युद्धस्तर पर निपटे। लेकिन इसके बजाय उसका ध्यान हरियाणा, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, आदि से अतिरिक्त पानी प्राप्त करने पर है।

यह मांग करते हुए वह जानबूझ कर यह तथ्य भुला देती है कि उसके सभी 9 डब्लूटीपी अपनी निर्धारित क्षमता से अधिक काम कर रहे हैं। इस कारण पड़ोसी राज्यों से अतिरिक्त जल मिल जाने पर भी दिल्ली जल बोर्ड इसे जनता तक पहुंचाने में अक्षम सिद्ध होगा। जहां तक प्रसंस्करण क्षमता बढ़ाने का सवाल है, पिछले साल मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल ने जल उत्पादन में तत्काल 131 एमजीडी तथा दीर्घकालीन रूप से 380 एमजीडी वृद्धि की कार्ययोजना को मंजूरी दी थी। इसमें चंद्रावल में 105 एमजीडी क्षमता का एक और प्लांट बनाना तथा द्वारका में 50 एमजीडी क्षमता वाला प्लांट पूरा करना शामिल था। लेकिन इस योजना पर अमल नहीं हुआ। चंद्रावल में प्लांट निर्माण शुरू नहीं हुआ और द्वारका में भी निर्माण कार्य धीमा चल रहा है।

यमुना, रावी-व्यास, गंगा व अन्य नदियों से पानी सप्लाई प्रबंधन में विफल दिल्ली सरकार अब भूमिगत जल पर निर्भर है जो वर्तमान समय में 10 प्रतिशत से अधिक योगदान करता है। केन्द्रीय भूमिगत जल बोर्ड-सीजीडब्लूडी के अनुसार दिल्ली के कुल क्षेत्र के 41 प्रतिशत में अत्यधिक दोहन हुआ है और इसके बावजूद वह रिचार्ज से अधिक भूमिगत जल निकाल रहा है। कुल भूमिगत जल रिचार्ज 2022 में 0.41 बिलियन क्यूबिक मीटर-बीसीएम से घट कर 2023 में 0.38 बीसीएम हो गया, जबकि वार्षिक भूमिगत जल संसाधन उपलब्धता 0.37 बीसीएम से घट कर 0.34 बीसीएम हो गई। यह स्वस्थ प्रवृत्ति नहीं है। प्राकृतिक संसाधनों के बेलगाम दोहन और उपलब्ध संसाधनों के दुरुपयोग से स्थिति बहुत गंभीर हो गई है। इसके साथ ही परिवारों के प्रयोग योग्य जल को उद्योगों को दिया जा रहा है। मांग और सप्लाई के बीच भारी असंतुलन के साथ ही दिल्ली की जल सप्लाई में भयानक कुप्रबंध्न तथा अनियमितताओं के कारण डीजेबी वित्तीय रूप से दीवालिया होने के कगार पर पहुंच गया है।

आधे से अधिक उत्पादित पानी की चोरी का अर्थ है कि बोर्ड को उस पर कोई राजस्व नहीं मिलता है। इसके साथ ही केजरीवाल की 'मुफ्त' योजना विभीषिका का कारण बनी हुई है जिससे प्रति परिवार एक महीने में 20,000 लीटर तक उपभोग के लिए कोई पैसा नहीं देना पड़ता है। जिन परिवारों को पानी के बिल मिलते हैं उन्होंने भी सालों से उनका भुगतान नहीं किया है। मुख्यमंत्री 'वन टाइम सेटलमेंट' पैकेज को उप-राज्यपाल से अनुमति दिलाने का प्रयास कर रहे हैं जिसके कारण राज्य के खजाने पर हजारों करोड़ रुपये का बोझ पड़ेगा। इसके साथ ही परिवारों से अधिकृत निजी एजेंसियों द्वारा भुगतान लेने की खबरे हैं जो कभी राजस्व विभाग तक नहीं पहुंचा है। इन सारी स्थितियों के कारण एक दयनीय स्थिति पैदा हुई है जिसके कारण दिल्ली जल बोर्ड-डीजेबी दीवालिया होने के कगार पर पहुंच गया है। जो बोर्ड एक दशक पहले तक मुनाफा कमा रहा था, आज वह 70,000 करोड़ रुपये से अधिक के घाटे में आ गया है। दिल्ली जल बोर्ड अपनी गतिविधियां केवल इसलिए चला पा रहा है कि उसे बैंकों व अन्य वित्तीय संस्थानों से उधार व कर्ज लेने की अनुमति है। दिल्ली जल बोर्ड द्वारा इस प्रकार लिए कर्ज को संप्रभु राज्य गारंटी प्राप्त है। यदि उसे कर्ज लेने की अनुमति न होती तो दिल्ली जल बोर्ड कब का ध्वस्त हो गया होता। ऐसे में यह सोच कर ही चिन्ता पैदा होती है कि इन स्थितियों में आखिर देश की राजधानी दिल्ली तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में भविष्य में जल-सप्लाई की क्या स्थिति होगी। जल संकट के साथ ही ढांचागत संरचनाओं के अन्य क्षेत्रों में भी संकट व्याप्त है।

पानी की चोरी के साथ ही बिजली चोरी लगातार जारी रहने के कारण बिजली उपलब्ध कराने वाली विद्युत वितरण कंपनियों पर भारी बोझ है जो केजरीवाल की 'मुफ्त बिजली' योजना के कारण और बढ़ रहा है। इस प्रकार दिल्ली में केजरीवाल सरकार द्वारा पानी चोरी में लगे 'टैंकर माफिया' समेत विभिन्न क्षेत्रों में पैदा की गई अव्यवस्था से नागरिकों को भारी परेशानी उठानी पड़ रही है। इससे डीजीबी भयानक कर्ज संकट में डूब सकता है। इन स्थितियों में केन्द्र सरकार को हस्तक्षेप करना चाहिए।

हम कर रहे जीवन की पटकथा का मंचन

"अभिनय की खूबसूरती इस बात में निहित है कि अभिनेता किरदार को किस हद तक आत्मसात कर लेते हैं।"

ब्रह्मकुमार निकुंज
(लेखक, आध्यात्मिक उपदेशक हैं)

हाल ही में भारतीय फिल्म उद्योग के एक दिग्गज अभिनेता को उनके अभिनय करियर के माध्यम से दुनिया भर में सांस्कृतिक मूल्यों के प्रसार में उनके योगदान के लिए सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार दिया गया। जब उन्हें पुरस्कार दिया जा रहा था, तो दर्शकों में से हर कोई खड़े होकर उस महान व्यक्ति के प्रति बहुत प्यार और सम्मान के साथ खड़े होकर उनका अभिवादन कर रहा था, जिसने सेल्युलाइड स्क्रीन पर इतने सारे किरदारों को जीवंत किया।

हम सभी ने सिनेमाघरों में इस उत्साह का अनुभव किया है, जब कोई वीर किरदार स्क्रीन पर एंट्री करता है, तो जोरदार जयकारे, सीटियां, तालियां और बहुत कुछ होता है। और फिल्म के अंत में, नायक दर्शकों का दिल जीत लेता है और शो को चुरा लेता है। चाहे वह राजकुमार की भूमिका निभाए या भिखारी की, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि उसके प्रशंसक उसकी एक झलक पाने के लिए सिनेमाघरों में उमड़ पड़ते हैं।

उनके अभिनय की खूबसूरती इस बात में निहित है कि वह किरदार को इस हद तक आत्मसात कर लेते हैं कि वह और उनका किरदार उनके प्रशंसकों को एक ही लगने लगता है। लेकिन ऐसा करते हुए भी, वह इस तथ्य के प्रति बहुत सचेत रहते हैं कि वह किसी विशेष नाटक में केवल एक अभिनेता हैं, उनकी भूमिका गढ़ी गई है, उनके संवाद लिखे गए हैं और वेशभूषा उस विशेष चरित्र के लिए डिज़ाइन की गई है। इसलिए, उनकी महानता केवल अपनी क्षमता के अनुसार भूमिका निभाने में निहित है। स्टारडम की अपनी लंबी यात्रा में, हर अभिनेता अक्सर एक दर्शक बन जाता है और अपने काम की आलोचना करता है ताकि वह अपने अभिनय को बेहतर बना सके। यह उनके द्वारा निभाई जाने वाली

विभिन्न भूमिकाओं से अलगाव का तत्व है जो उन्हें आगे बढ़ने, स्पष्टता के साथ एक साथ कई भूमिकाएं निभाने और फिर दिन के अंत में अपने निजी जीवन में लौटने की अनुमति देता है। हम में से बहुत से लोग नहीं जानते कि विश्व चक्र इस नाटक के समान है जिसमें हम सभी अद्वितीय भूमिकाओं वाले अभिनेता हैं। हर कोई अपने जीवन में नायक है और एक नायक बन सकता है जो तालियाँ बटोर सकता है। हालाँकि, आज हम शायद ही किसी को दूसरे व्यक्ति की जय-जयकार करते हुए पाते हैं। क्योंकि, एक-दूसरे के प्रदर्शन या स्क्रिप्ट से बहुत असंतोष है। नतीजतन, नाटक एक त्रासदी बन गया है। अभिनेताओं के अपने प्रदर्शन की बजाय एक-दूसरे के प्रदर्शन की आलोचना करने से व्यापक अराजकता फैल गई है। इस परेशानी का कारण यह है कि हममें से ज़्यादातर लोग यह जाने बिना ही अभिनय करते हैं कि धरती एक रंगमंच है और हम सभी यहाँ अपनी-अपनी भूमिकाएँ निभाने आए हैं। दूसरे, हर अभिनेता की भूमिका अलग और पहले से तय होती है और इसलिए उसे किसी और की भूमिका से मिलाने की कोशिश करना बेकार है। तीसरे, दुनिया के नाटक का सबसे बड़ा नियम यह है कि यह हमेशा सबके लिए फ़ायदेमंद होता है। इस समझ या इसकी चेतना के अभाव में, हम अपनी भूमिकाओं से जुड़ जाते हैं, अपनी वेशभूषा और मेकअप बदलना भूल जाते हैं और हर भूमिका के हिसाब से ढलने की लचीलापन खो देते हैं। एक ऐसे व्यक्ति का सरल उदाहरण लें जो एक ही समय में बेटा, पति, पिता, दोस्त और कई अन्य भूमिकाएं निभाता है।

अगर वह पुरुष होने की चेतना में है, तो वह घर पर अपनी पत्नी पर हावी हो सकता है या दफ़्तर में अपनी महिला कर्मचारियों को नीची नज़र से देख सकता है। काम पर, वह बॉस होने की अपनी भूमिका से इतना चिपका रहेगा कि वह उनका सहकर्मी बनना ही भूल जाएगा। दूसरी ओर, यदि वह इस बात से अवगत है कि वह एक अभिनेता है और उसे नायक की तरह सभी का दिल जीतना है, तो वह अपनी भूमिका की आवश्यकताओं को समझेगा और जो भी वह करेगा, उसमें सक्रिय, सटीक और आकर्षक होगा। हम जो भी किरदार निभाते हैं, उसके उतार-चढ़ाव को जीते हुए, हम खुद को थका देते हैं और प्रत्येक भूमिका की माँगों को पूरा करने या दृश्यों में उतार-चढ़ाव को अच्छी तरह से झेलने के लिए पर्याप्त शक्ति नहीं जुटा पाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप भावनात्मक उथल-पुथल होती है और दुख एक नियमित आगंतुक बन जाता है, जबकि नाटक का उद्देश्य अभिनेताओं को खुशी और आनंद का अनुभव कराना है।

दूसरी ओर, यदि हम अपनी भूमिकाओं से विरक्त हो जाते हैं और इस शाश्वत नियम पर विश्वास रखते हैं कि नाटक सार्वभौमिक लाभ के लिए लिखा गया है, तो हानि और लाभ, आराम और दर्द की भावनाएं खत्म होने लगेंगी और हमारा मन हर दृश्य में होने वाले घटनाक्रम पर सवाल उठाना बंद कर देगा।

इसलिए, कहानी का नैतिक यह है कि हमें विरक्त होना चाहिए और फिर भी हम जो भूमिका निभा रहे हैं, उसमें शामिल होना चाहिए। इस विश्व नाटक में सुपरस्टार बनने का यही गुण है।

आप की बात

केजरीवाल का संकट

केजरीवाल का संकट दूर होने का नाम नहीं ले रहा है। कहां वे जमानत पर बाहर आने की तैयारी कर रहे थे, पर उनकी जमानत रद्द हो गई। इस प्रकार फिलहाल वे तिहाड़ जेल में ही रहेंगे। कभी बीमारी तो कभी चुनावी कारण से वे भरसक प्रयास के बाद जेल से बेल पर बाहर तो आ जाते हैं किन्तु फिर बेल खत्म होते ही उन्हें जेल में पहुंचा दिया जाता है। दिल्ली में जल-संकट है तो दूसरी ओर केजरीवाल जेल-संकट से जूझ रहे हैं। जल-संकट को लेकर अनशन पर बैठी मंत्री आतिशी चौथे दिन बीमार हो गई और उन्हें अस्पताल में भर्ती करना पड़ा। पिछले कुछ वर्षों से दिल्ली की आप सरकार पर रुक-रुक कर संकट के बादल छाते ही रहे हैं। घोटालों के कारण कभी एक मंत्री जेल जाता है तो कभी दूसरा। विडंबना है कि आप पार्टी और केजरीवाल पर संकट का खामियाजा दिल्ली की जनता को भुगतना पड़ता है। आरोप है कि टैंकर माफिया से कमीशनखोरी के कारण ही दिल्ली में जल-संकट गहराया है। आश्चर्यजनक रूप से भ्रष्टाचार-विरोधी आंदोलन से उपजी पार्टी के अनेक नेता भ्रष्टाचार में जेल में बंद है। दिल्ली की जनता ने लोकसभा चुनाव में भाजपा को सभी सीटों पर विजय दिला दी। लेकिन केन्द्र में मोदी सरकार बनने के बावजूद भाजपा भी उसकी कोई मदद नहीं कर पा रही है।

– **शकुंतला महेश नेनावा,** इंदौर

एक देश एक चुनाव

समय व आर्थिक बोझ का तकाजा है कि अब एक देश, एक चुनाव की अवधारण लागू होनी चाहिए। यह समय, श्रम व धन की बर्बादी कों रोकने वाली होगी। वर्तमान कानूनी प्रावधानों के अनुसार लोकसभा व विधानसभा चुनाव में एक ही उम्मीदवार दो स्थानों से चुनाव मैदान में उतर सकता है। दोनों सीट पर उसकी जीत की स्थिति में छोड़ी गई सीट पर पुनः उपचुनाव होते हैं। इसी तरह लोकसभा व विधानसभा चुनाव में पहले से चुने गए सांसद व विधायक इन सदनों के चुनाव में उम्मीदवार बना दिए जाते हैं। जीतने पर उन्हें एक पद छोड़ना पड़ता है। इस बार के लोकसभा चुनाव में कई दलों के विधायक सांसद चुने गए हैं। इससे विधायक पद त्यागने पर पुनः कई स्थानों पर विधानसभा उपचुनाव कराने पड़ेंगे। यह देश और खून-पसीना बहा कर कमाने वाली जनता के संसाधनों की बरबादी है। पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में गठित समिति ने एक देश-एक चुनाव मुद्दे पर राजनीतिक दलों व विशेषज्ञों से व्यापक विचार-विमर्श कर इस व्यवस्था के पक्ष में अपनी सहमति दी थी तथा उसे लागू करने की रूपरेखा भी सुझाई थी। राजनीतिक दलों को इस पर दलगत सीमाओं से ऊपर उठ कर विचार करना चाहिए।

– **हेमा हरि उपाध्याय,** खाचरोद

हिजाब की पैरवी

हमारे देश में ओवैसी की पार्टी हिजाब की पैरवी करती रही है, जबकि कर्नाटक के स्कूल-कॉलेजों का कहना है कि हिजाब मुस्लिम धर्म का अनिवार्य अंग नहीं है। मध्य एशिया के मुस्लिम बहुल कजाकिस्तान ने हिजाब के इस्तेमाल पर स्थाई रोक लगा दी है। कजाकिस्तान के राष्ट्रपति इमो माली रहमान ने हिजाब को एक विदेशी परिधान मानकर इस पर प्रतिबंध लगाने का ऐलान किया है। इसके बाद हिजाब पहनने पर 60 हजार से लेकर 5 लाख रुपए तक जुर्माने का प्रावधान रखा गया है । कजाकिस्तान सरकार ने यह कदम देश में धर्मनिरपेक्षता को बढ़ावा देने के लिए उठाया है। मध्य एशिया ने दशकों पहले महिलाओं को पुरुषों के बराबर स्थान देने के लिए उनको बुर्के, केवल घर में रहने व हिजाब, आदि की गुलामी से आजादी दिलाई थी। मध्य एशिया के साथ ही आजकल पश्चिम एशिया के अनेक मुस्लिम बहुल देश भी महिलाओं को अनेक क्षेत्रों में आजादी दे रहे हैं ताकि वे जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों के बराबर आ सकें। हिजाब या बुर्का महिलाओं को पुरुषों की तुलना में दोयम दर्जे का दिखाने वाली सड़ी-गली सोच का प्रतीक है। वर्तमान समय में भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में इसकी पैरवी किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं की जानी चाहिए।

– **मनमोहन राजावत,** शाजापुर

मौसम की मार

नेटवर्क संगठन वर्ल्ड वेदर एट्रिब्यूशन-डब्लूडब्लूए द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण में चौंकाने वाले अवलोकन सामने आए हैं। तापमान में 35 गुना वृद्धि हुई है जो चालू वर्ष सबसे अधिक है। पृथ्वी के उत्तरी गोलार्ध क्षेत्र में यह देखा गया है कि मानसून के मौसम से पहले भीषण गर्मी की लहर आती है, यानी लू चलती है। इस वर्ष सबसे अधिक गर्मी के कारण सारी दुनिया के लोगों पर तनाव बढ़ा है। पूरी दुनिया में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में भारी वृद्धि हुई है। इसी तरह जीवाश्म ईंधन के बढ़ते उपयोग से भारी मात्रा में गर्मी पैदा हो रही है तथा प्रदूषण बढ़ रहा है। ऐसी गर्मी से होने वाले हीट स्ट्रोक का खतरा बढ़ने का अनुमान है। इसमें शरीर की शीतलन प्रणाली पूरी तरह से ध्वस्त हो जाती है और अगर समय रहते इलाज नहीं किया जाता है तो मौत भी हो सकती है। दक्षिण पश्चिम अमेरिका, ग्वाटेमाला, मैक्सिको, होंडुरास, बेलीज और अल साल्वाडोर में किए सर्वेक्षण में ये चौंकाने वाले नतीजे आए हैं। इस प्रकार इन्सानों के साथ ही सभी प्रकार के जीव-जंतुओं पर मौसम की मार लगातार गंभीर होती जा रही है।

– **दत्तप्रसाद शिरोडकर,** मुंबई

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

Business Standard
VOLUME XXXI NUMBER 61
NEW DELHI | THURSDAY, 27 JUNE 2024

Employment puzzle

The informal sector is not creating enough jobs

The recently published factsheet on the Annual Survey of Unincorporated Sector Enterprises (ASUSE), by the Ministry of Statistics and Programme Implementation, for 2021-22 and 2022-23, paints a sobering picture of the employment situation in the country. Despite showing resilience after the pandemic, the unincorporated sector has not generated significant employment. The sector, encompassing small businesses and sole proprietorships across manufacturing, services, and trade, represents the informal segment of the economy. Workers and enterprises in this segment typically lack formal recognition and are usually excluded from social-security schemes. However, the segment plays a key role in value chains and contributes to employment generation. The factsheet indicates the number of establishments and workers registered a compound annual growth rate of 5.88 per cent and 7.83 per cent, respectively, during the period April 2021-March 2022 and October 2022-September 2023.

However, as reported by this newspaper recently, compared to the results of the 73rd round of the National Sample Survey for July 2015-June 2016, despite an increase in the number of enterprises, the workforce in the unincorporated sector remains lower by 0.16 million, which raises questions about the employment-generation capacity in the informal sector. This discrepancy can be attributed to at least two factors. First, many unincorporated enterprises remain very small due to their limited production capacity or constrained demand. Second, they might be becoming more capital-intensive due to advancements in production technology and machinery. The exact reasons remain unclear, but both scenarios result in lower levels of employment generation. The sector has been significantly affected by several exogenous shocks over the past decade, including demonetisation, the introduction of goods and services tax, and Covid-related disruptions. As reasoned by the chairperson of the Standing Committee on Statistics, Pronab Sen, about 2 million unincorporated enterprises are added annually, employing 2.5-3 persons each. However, as the numbers suggest, due to these successive economic shocks, according to Dr Sen, an estimated 10 million enterprises and 25-30 million jobs may have been lost during this period.

While a detailed report on the survey will provide more insight into what is happening in the sector, the factsheet highlights the structural weakness within the economy. The share of regular, salaried workers in the workforce, as indicated by the Periodic Labour Force Survey, is not improving. The data on the informal sector shows it is also not creating enough jobs, partly reflected in the recent increase in agricultural employment. Further, given that the creation of enterprises in the informal sector seems to have suffered, with a marginal increase in value added over the years, sceptics may raise more questions about the gross domestic product estimates because of the dependence on the formal-sector data. Nevertheless, the latest survey of enterprises in the informal sector once again highlights the employment situation in the country. Given that India has the largest young cohort in the world and its workforce will grow in the coming years, creating gainful employment remains the foremost policy challenge. The new government, therefore, would be well advised to make policy interventions with the objective of creating jobs outside the agricultural sector. Without a significant increase in employment opportunities, it will become increasingly difficult for India to sustain high growth in the medium to long run.

Worldwide sales

Dedicated hubs will streamline e-commerce exports

As part of the 100-day action plan of the Union government, efforts are being put in place to boost India's export potential, especially e-commerce export. Accordingly, the Directorate General of Foreign Trade (DGFT) and the Department of Revenue are reportedly working to establish designated e-commerce export hubs across the country. With the government aiming to streamline online export shipment from India, this is indeed a welcome step for exporters. The export hubs are expected to act as a centre for favourable business infrastructure and facilities for cross-border e-commerce, including facilitating faster Customs clearance of cargo and also addressing the problem of reimportation because about 25 per cent of goods in e-commerce are reimported. Additionally, the hubs will offer warehousing facilities, processing returns, labelling, product testing, repackaging items, and dedicated logistics infrastructure for connecting to and leveraging the services of nearby logistics hubs, thereby achieving agglomeration benefits for exporters.

E-commerce platforms link local producers even in rural and remote districts with global supply chains. They also resolve market-access issues, which are a significant obstacle hindering exports by micro, small, and medium enterprises (MSMEs). This will particularly help informal businesses and MSMEs that find it convenient to export through digital platforms. In an attempt to leverage e-commerce platforms to support local exporters, manufacturers and MSMEs in reaching potential international buyers, the DGFT signed a memorandum of understanding with global e-commerce firm Amazon last year to offer capacity-building sessions, training, and workshops for MSMEs across districts identified by the DGFT as part of the "District as Exports Hub" initiative. Amazon surpassed $8 billion in cumulative exports from India in 2023 and aims to achieve its ambitious target of $20 billion by next year. Notably, the world's largest retailer, Walmart, too surpassed $30 billion in cumulative sourcing from India in more than two decades of operations in the country.

India's exports through online platforms stood at $8-10 billion last year, compared to China's staggering figure of more than $300 billion. A key reason for this gap is the cumbersome compliance process associated with exports, especially when it comes to payment reconciliation, which is particularly challenging for new or small exporters. At the same time, global cross-border e-commerce trade was $800 billion. With India's cross-border e-commerce exports likely to increase to $200 billion over the next six to seven years, it can become a key strategy in achieving the $2 trillion overall exports target by 2030. The Foreign Trade Policy of 2023, which calls for greater focus on emerging areas of export, identifies e-commerce as a focus area for amplifying India's exports.

Amid rising geopolitical tensions, supply-chain disruption, and global headwinds, India's export performance has witnessed a slowdown in recent years. India's services exports increased by only $15.8 billion in 2023-24 over 2022-23, while merchandise exports declined $14 billion in the same period. Overall, India's combined value of exported goods and services registered a marginal increase of around $2 billion in 2023-24. At a time when export growth remains tepid and the overall trade deficit is around $78 billion, establishing a supportive e-commerce ecosystem can truly give a fillip to India's export performance. Given the patchwork of rules and export provisions framed for exporters, there is an urgent need for a separate e-commerce export policy, which can ease the compliance burden on exporters.

ILLUSTRATION: BINAY SINHA

Prioritise deep trade agreements

India's global competitiveness and investment appeal hinge on these agreements

STRAIGHT TALK
AMITA BATRA

It is encouraging to note that the Ministry of Commerce organised a "Chintan Shivir" last month to develop strategies and standard operating procedures for future free-trade agreement (FTA) negotiations. It is a timely initiative given that negotiations towards deeper FTAs with the European Union and the UK have seen repeated postponements of deadlines, and review of other FTAs, including with the Asean, is yet to be concluded long after initiation.

In this context, it would be useful for India to formulate its FTA strategy with a focus on core issues in deep trade agreements rather than continuing with limited, shallow trade liberalisation as in the past. Developing an understanding of deep FTAs as instruments facilitating movement of intermediate goods across multiple borders, and, hence, integration with global value chains (GVCs) will help yield better outcomes in future FTA negotiations.

The guiding factor in India's FTA negotiations, thus far, has been the past experience of increasing bilateral trade deficits with FTA partner economies. Consequently, FTA negotiations by India are undertaken with a degree of scepticism. Instead, the appropriate experiential learning from our earlier FTAs should have been to reduce the preferential margin offered in FTAs and increase manufacturing sector export competitiveness. Compared to the global average most favoured nation (MFN) tariffs of 0-5 per cent that ensure negligible preferential margin in FTAs for most economies, India's relatively high and progressively increasing applied MFN tariffs, especially in the manufacturing sector, inevitably create the scope for a higher preferential margin (clustered around 10-15 per cent) and, hence, bilateral trade in favour of the FTA partner. Therefore, a reduction of average applied MFN tariffs in the manufacturing sector in India and aligning them with those of comparator emerging market economies should be a necessary trade policy reform for future FTA negotiations. This should be combined with carefully calibrated preferential tariffs offered in the FTA such that GVC dynamic sectors are at an advantage. Comparative advantage at the task level, coupled with possible complementarities in the partner country/ member economies' production networks, should be the basis of calibrating the extent and time schedule for tariff preferences in the FTA. This will also assist India in deepening its tariff liberalisation in the FTAs to the World Trade Organization-stipulated "substantially all trade" levels.

Manufacturing sector competitiveness can be enhanced through participation in deep FTAs, as they help anchor domestic producers in GVCs. Deep FTAs cover regulatory policy issues in addition to liberalisation of trade in goods and services. Their focus, broadly, is on liberalisation of investment, protection of intellectual property rights (IPRs) and environment, social and governance (ESG) issues. Constituent provisions in these areas are invariably WTO-plus, that is, they extend beyond commitments made at the WTO and/ or include aspects not covered by the WTO.

India has thus far found negotiating the deeper provisions of investment liberalisation and ESG difficult. This has been a limiting issue in its FTA negotiations with both the EU and the UK. The Australia-India economic cooperation and trade agreement, signed in 2022, also does not include an investment chapter. However, globally, the number of deep trade agreements and deeper provisions therein has increased in the last decade. While the EU and the US have been in the lead, the East Asian economies have also upgraded with membership of the Regional Comprehensive Economic Partnership (Rcep) and the Comprehensive and Progressive Agreement for Trans-Pacific Partnership (CPTPP). Although the coverage and depth of provisions in these areas in deep FTAs has been idiosyncratic and tailored to context, India's approach of classifying these policy areas as "non-trade" issues and refusing to negotiate is probably outdated and unproductive. Empirical literature provides evidence that deep trade agreements facilitate the movement of intermediate goods/GVC trade, which continues to be the predominant component of global goods trade post-pandemic and despite trade shocks. Hence, it is important for India to focus on participation in deep trade agreements from the perspectives of increasing its integration with GVCs and facilitating import of intermediate goods to enhance its manufacturing and export competitiveness and even for the success of its production-linked incentive scheme.

Intermediate goods in GVC-led trade are differentiated parts and components, each being highly specialised to its intended use and, therefore, customised to the requirements of the buyer. So, GVC related-investments involving cross-border transactions in differentiated intermediate goods require specific contractual obligations, safeguards and distinctive rules and standards to be negotiated among participant countries. A coordinated and complementary approach towards trade policy, investment and protection of IPRs, given the scope for investment accompanying transfer of technology/ know-how across borders, therefore becomes essential for the multiple countries involved across complex GVCs.

Empirical analysis also shows a positive relationship between additional provisions on investment liberalisation, facilitation, IPRs and investor protection on foreign direct investment (FDI) inflows that are integral to GVC participation. Appropriately designed investment and related regulatory provisions not only help the investment inflows and transfer of technology but also signal commitment towards upgrading the domestic regulatory framework in this respect. There is, therefore, the additional advantage of MFN applicability of the regulatory framework and certainty of business environment. Together with goods and services trade liberalisation, the investment-related provisions in deep FTAs help reduce costs of doing business and trade costs for MNCs operating in multiple locations and production networks. In comparison, standalone bilateral investment treaties (BITs) are a far more restrictive tool and empirical evidence of their impact on FDI inflows has been largely ambiguous.

Negotiating the investment provisions in its FTAs would also require India to evolve its position on the appropriate investor protection mechanism. Most countries have adopted a combination of investor-state dispute settlement and state-state investor protection mechanism, whereas India, drawing upon its model BIT 2016, continues to insist upon exhaustion of domestic remedies as a prior mechanism. However, this may become increasingly difficult as the CPTPP, already in effect, and of which both the Asean and UK are members, enables investors to commence arbitration without any prior recourse to domestic processes. The EU in its FTAs has proposed an alternative akin to a multilateral court for dispute resolution, but this has yet to be ratified.

Therefore, FTA negotiations cannot be business as usual anymore. To be an attractive alternative investment location in the GVC diversification strategy of large corporations and thereby enhance its manufacturing and export competitiveness, India will need to aim for an early conclusion of the deeper trade agreements.

The writer is senior fellow, CSEP, professor, SIS, JNU (on leave) and author of India's Trade Policy in the 21st Century, *Routledge: London, 2022. The views are personal*

Regulatory action: Shock and awe

THE OCCASIONAL ASIDE
AMIT TANDON

We often see regulatory actions against various financial entities after the regulator has "inspected their books". Recent regulatory action includes restrictions on accepting deposits, opening new accounts through online banking channels, issuing co-branded cards, launching new mobile products, and managing debt public issues. These actions reflect the regulators' commitment to maintaining financial stability, fair markets, and ensuring compliance with regulations. However, investors view such action with shock and awe, as they impact them directly.

Another sector that periodically sees inspections — and regulatory action — is pharmaceutical firms exporting to the US. Here, inspections are conducted by the US Food and Drug Administration (FDA) to assess a regulated facilities' compliance with applicable laws and regulations, such as the Food, Drug, and Cosmetic Act, and various other related Acts, to ensure the safety and quality of medicines.

Unlike the financial sector reviews and audits, which are an "all-year" affair, US FDA inspections are conducted every few years with an element of surprise regarding their timing. The FDA investigators arrive at the premises and present a "notice of inspection", or form 482. They then examine the production process, look at relevant records and collect samples. At the conclusion of the inspection, the observations, referred to as Form 483, are submitted, serving as a guide for corrective action. This gives the facility an opportunity to take voluntary remedial steps and prevent their recurrence. In extreme cases, the FDA might recommend recalling a drug or preventing its export to the US.

Similar to financial inspections, the Form 483 remains confidential between the regulator and the reviewed entity. But there are two variations that I am aware of. As with the financial sector regulator, FDA inspections are confidential initially. But the FDA does review the findings, the company's response, and other data, and usually classifies its finding within 90 days into three buckets: (i) No action indicated, when there are no significant issues; (ii) voluntary action indicated, when minor issues that need correction are identified; and (iii) official action indicated, where serious violations are identified that require enforcement action. The classification is publicly disclosed.

Two, under the Freedom of Information Act, individuals can request the FDA 483 for a fee. The FDA redacts commercially sensitive information before releasing the document. Unfortunately, there is no time commitment to this, and people have been known to wait for up to two years to access this information. This redacted file is then uploaded on the FDA website and can be freely accessed by all stakeholders, including its investors. I have simplified things, but this is the broad protocol.

The regulators work with the objective of ensuring patient safety, fair treatment of borrowers, and adherence to rules. Their actions, even if viewed as somewhat extreme, helps them preserve the integrity of the industry they regulate. But there is no getting away from the fact that severe regulatory decisions impact various stakeholders and may have unintended consequences. To give just one example, admonishing a bank that its systems are vulnerable might lead to an uptick in cyberattacks. This is not to argue that regulators should overlook shortcomings, but there needs to be a way to involve investors and other affected stakeholders into this exchange.

At present, once an entity hears from the regulator, it discloses the summary to the stock exchange. If the action is punitive, it leaves investors feeling bruised, who then argue that such action is knee-jerk, even if the discussion has been ongoing.

Should the FDA then first give a cure period when serious violations are observed? It is hard to argue given that lives and limbs are involved, so I will focus on the financial sector, where change may be relatively easy. Given that the inspections are often ongoing, making a public disclosure only after the "final" letter is received is what causes severe market disruptions, particularly if the action is also severe. Disclosures and updates regarding the intervening communication should be encouraged. While it may be argued that whenever such information is first disclosed, it may lead to market volatility, timely and meaningful disclosures in some form would better prepare the market.

Further, financial regulators should explore classifying their regulatory communication based on the nature and seriousness of the findings. They can publish the summary findings and eventually the entire inspection report or encourage the regulated entities to do so. An annual or semi-annual summary of their inspection findings, without naming specific entities, will also go a long way in articulating regulatory expectations. They should also highlight the best practices that they have observed. This will give stakeholders the information that they crave for and all regulated entities clear metrics for improvement.

The writer is with Institutional Investor Advisory Services India Ltd. The views are personal. X: AmitTandon_In

The limits of freedom

BOOK REVIEW
M S SRIRAM

One person's freedom is another's unfreedom. This one sentence in the book defines the theme of *The Road to Freedom: Economics and the Good Society* by Joseph Stiglitz. It is an important read, particularly in the context of the debate on freebies, *revdis*, redistribution and inheritance tax. It is also important in the context of the arguments being made by Thomas Piketty about inequality, with particular reference to India. Dr Stiglitz takes on the arguments by Milton Friedman and Friedrich Hayek about the neoliberal thinking of free markets. He also reinterprets Adam Smith and his theory of moral sentiments. This is a nuanced book, in which it is difficult to find clear answers— for obvious reasons. The world itself is complex with conflicts — between individuals; families; countries; generations; human and nature. In each case, one party exercises its right to survival and prosperity (freedom), which comes at the cost of the other (unfreedom). How to minimise the harm and optimise universal welfare is the basic quest of the book.

In asking these difficult questions with simple and relatable illustrations, Dr Stiglitz highlights the limitations of each of our actions. Recognising the limitations alone would have a sobering effect on the actions. That will help us to do minimal harm while optimising welfare. The easiest and relatable illustration is that of traffic rules. Traffic rules are restrictive (and therefore represent unfreedom) and coercive (due to the tickets issued for violation) but are needed to optimise the good of all and to reduce chaos that comes out of unfettered freedom.

Why are free markets not really free? The argument is that the underlying assumption that free markets mean a freedom to choose is flawed. That is because the underlying assumptions of free markets of near-perfect competition are never met. Contracts are always between unequal parties — say, employer and employee — where the former has far greater power to enforce her side of the contract and therefore could be exploitative. Competitive advantage through efficiency in the markets is not always because the competitor is inefficient. The profit-maximising definition of efficiency leads to exploitation and extraction of resources (including human resources) in a very short horizon. The role of the state becomes important here. The presence of the state as a rule-setter to restrict "freedom" in free markets is to optimise operations.

Let me take a simple example to illustrate the argument. Free market enthusiasts argue that overall growth and economic prosperity leads to a trickle-down effect by two means: (a) the growth itself creating opportunities for people; and (b) increased tax collection leading to better welfare and redistribution. Strong regulation on labour compensation and practices makes workers better off; reduces the profit of the corporation accruing due to "exploitation" and reduces the need for the state to redistribute welfare payments to the exploited worker. The welfarist labour law regime itself ensures that the redistribution takes place in the local loop where everyone optimally benefits by getting a fair rent. Therefore, the role of the state, if any, has to be much greater when we talk of free markets. Dr Stiglitz illustrates how the 2008 global financial crisis illustrated the phenomenon of privatisation of profits and socialisation of losses. The corporations were bailed out, while the resources used were generated from the taxpayer.

One of the underlying arguments that Dr Stiglitz makes is that there is a moral position underlying all economic arguments. While the human race defined in the market context is seen as a selfish, profit-maximising, rational being, the reality is otherwise. When we examine the exchanges in the family, across families in society, we find that it is perfectly fine to be welfarist and caring. But there is a larger moral question. Should one have the freedom to exploit and then redistribute or be welfarist at her choice, or should the freedom to exploit be curtailed? How does one define exploitation?

THE ROAD TO FREEDOM: Economics and the Good Society
Author: Joseph E Stiglitz
Publisher: Allen Lane
Pages: 356
Price: ₹899

In the chapter on why neoliberal capitalism failed, Dr Stiglitz identifies these multiple sources of exploitation. While neoliberalism advocates hands-off policies even for public goods, progressive capitalism looks at a more interventionist approach keeping the larger welfare of society in view. This is particularly important when the damages appear intangible (environment) and there are large information gaps.

The most striking feature in the book are references to the cooperative system, particularly the credit unions as an antidote to large banks and the risks that they expose the economy to. Moving towards smaller neighbourhood community-based economic initiatives may turn out to be more inclusive and equitable than embracing the centrality of capital. Cooperatives, for instance, by their very statement of identity move away from the primacy of capital towards compensating other factors of production fairly. The credit unions sort out the financial savings and credit needs of the community in the local loop and approach the external world only for the residual requirements. That would mean fewer structures and overheads, and less intermediation costs of the so-called professionals and better handling of resources. While Dr Stiglitz does not go so far as to say that we need to fundamentally change our economic thinking, he takes us away from the capital-centric primacy of profits argument to a more well-rounded argument of progressive capitalism.

While this is a book that is largely in the economic sphere, these arguments also need to be part of a political discourse that is consultative and inclusive. To that extent, we need to move away from centralisation and look at capital-led efficiency and profit parameters with a bit of scepticism and with a view that all efficient and extractive profit frameworks need a strong oversight of the state.

The reviewer is professor, Centre for Public Policy, Indian Institute of Management, Bangalore. mssriram@pm.me